

अवध ज्योति

अवध भारती संस्थान की अवधी त्रैमासिकी

वर्ष – 21

जनवरी–मार्च – 2015

वंशीधर शुक्ल : एक विराट महामानव

अवधी सम्राट पं. वंशीधर शुक्ल को याद करते हुए

समग्र लोक चेतना के राष्ट्रीय कवि : पं० वंशीधर शुक्ल

पं. वंशीधर शुक्ल का राष्ट्रवादी यथार्थ बोध

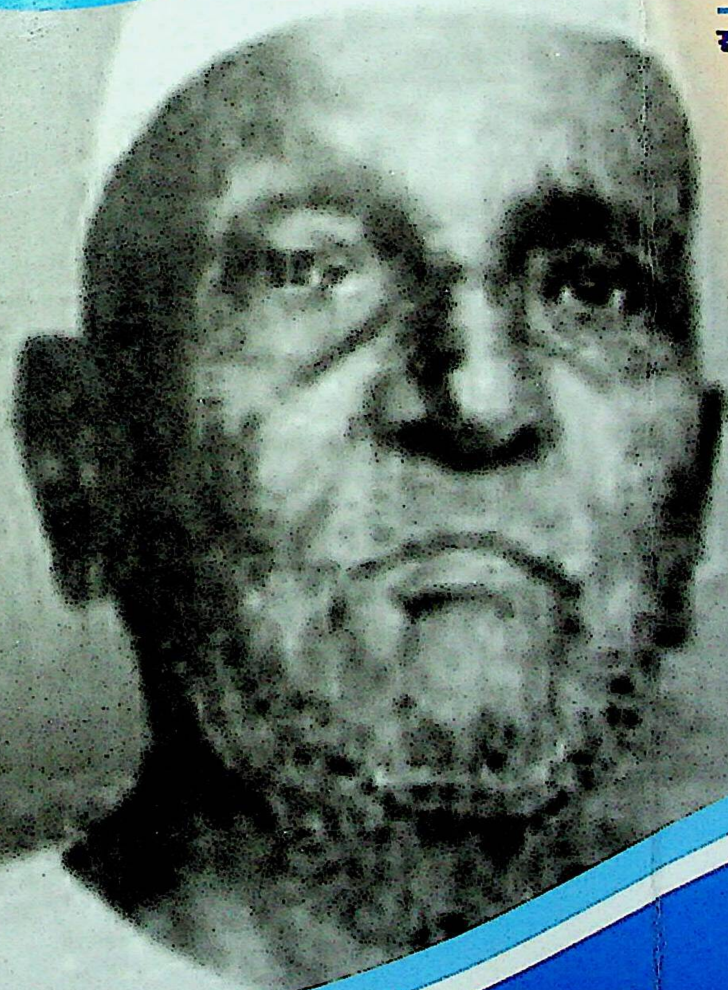
आधुनिक अवधी के प्रेमचंद : वंशीधर शुक्ल

वंशीधर शुक्ल : यादों के आइने में

वंशीधर शुक्ल के खड़ी बोली काव्य में हास्य व्यंग्य

पं. वंशीधर शुक्ल के काव्य में ग्राम्य वर्णन

अवधी के जाज्ज्वल्यमान नक्षत्र वंशीधर शुक्ल



वंशीधर शुक्ल विशेषांक

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ

एवम्

अवध भारती संस्थान हैदरगढ़ बाराबंकी

के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित

चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका'

के जन्म शताब्दी वर्ष (2014-2015) के अवसर पर
23 जनवरी 2015 को होने वाले सारस्वत अनुष्ठान में समागत
विद्वानों कवियों, साहित्यकारों तथा अवधी प्रेमियों का हार्दिक स्वागत एवं आभार

कार्यक्रम की रूपरेखा

मुख्य अतिथि - **जिलाधिकारी अमेठी**

अध्यक्षता - **श्रीयुत उदय प्रताप सिंह** कार्यकारी अध्यक्ष उ0प्र0 हिन्दी संस्थान

विशिष्ट अतिथि : **डॉ0 सुधाकर 'अदीब'** निदेशक उ0प्र0 हिन्दी संस्थान

प्रथम सत्र - विचार सभा (10:30 से 1 बजे तक)

विषय : अवधी के उन्नयन में रमई काका का योगदान

...ित वक्ता : **डॉ. कन्हैया सिंह, प्रो. अरुण तिवेदी, डॉ. चम्पा श्रीवास्तव, कमलनयन पाण्डेय।**

द्वितीय सत्र : कवि गोष्ठी (अपरान्ह 1:30 से)

उद्‌घाटन - **श्री राकेश प्रताप सिंह** विधायक गौरीगंज

विमोचन - **अपर जिलाधिकारी अमेठी**

-: काव्यपाठ :-

सर्वश्री उदयप्रताप सिंह, विकल साकेती, सोम ठाकुर, माहेश्वर तिवारी, डॉ0 सुमन दुबे,
जमुनाप्रसाद उपाध्याय, सर्वेश अस्थाना, अशोक टाटम्बरी, डॉ. प्रकाश गिरि, अतुल बाजपेयी।

संयोजक :
डॉ0 रामबहादुर मिश्र
अध्यक्ष अवध भारती संस्थान
हैदरगढ़, बाराबंकी

उत्तरापेक्षी
जगदीश 'पीयूष'
अध्यक्ष- अवधी अकादमी

निवेदक -
अनिल मिश्र
प्रधान सम्पादक
उ0प्र0 हिन्दी संस्थान

विश्वम्भरनाथ अवस्थी उपाध्यक्ष

ओम प्रकाश 'जयन्त' सचिव

सूर्य प्रसाद शर्मा 'निशिहर' उप सचिव

विष्णु कुमार शर्मा कोषाध्यक्ष

अवध भारती संस्थान हैदरगढ़ बाराबंकी - 225124 उ.प्र.

अवध-ज्योति (त्रैमासिकी) के लिए सैप प्रिण्टर्स बी.एच.ई.एल. अमेठी से मुद्रित तथा अवध भारती संस्थान हैदरगढ़ बाराबंकी से प्रकाशित।
संपादक/प्रकाशक - डॉ0 रामबहादुर मिश्र
दिनांक : 30 मार्च 2015



अवध ज्योति

अवध भारती संस्थान की अवधी त्रैमासिकी

वर्ष - 21 जनवरी-मार्च 2015

एक प्रति - रु. 25
वार्षिक - रू. 100

विषय-क्रम

राम जोहारि — राम वहादुर मिसिर
सम्पादकीय — डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स'
अवधी अकादमी का प्रस्ताव — अवध भारती संस्थान

लेख —
वशीधर शुक्ल : एक विराट महामानव - ओम प्रकाश अवस्थी
अवधी सम्राट पं. वंशीधर शुक्ल को याद करते हुए - राहुल देव
समग्र लोक चेतना के राष्ट्रीय कवि : पं0 वंशीधर शुक्ल - कोमल शास्त्री
पं. वंशीधर शुक्ल का राष्ट्रवादी यथार्थ वोध - डॉ0 श्याम सुन्दर दीक्षित
आधुनिक अवधी के प्रेमचंद : वंशीधर शुक्ल - डॉ0 विनयदास
वंशीधर शुक्ल : यादों के आइने में - डॉ0 अनामिका श्रीवास्तव
वंशीधर शुक्ल के खड़ी बोली काव्य में हास्य व्यंग्य-डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स'
पं. वंशीधर शुक्ल के काव्य में ग्राम्य वर्णन - सीमा पाण्डेय
अवधी के जाज्वल्यमान नक्षत्र वंशीधर शुक्ल - डॉ0 ज्ञानवती दीक्षित

कवितायें —
डॉ0 भारतेन्दु मिश्र, शान्तिशरण मिश्र 'व्यंग्य सीतापुरी', डॉ0 रंगनाथ मिश्र 'सत्यं', डॉ0 अशोक 'गुलशन', शारदा प्रसाद वर्मा 'भुसुण्डि', डॉ0 बृजेन्द्र अवस्थी, सत्यधर शुक्ल
पं. वंशीधर शुक्ल : रचना संसार की बानगी
खड़ी बोली की रचनायें, अवधी रचनाएं, अवधी कहानी - बेदखली

नाप तौल :
नकछेद भाई, रमई काका का पुनर्पाठ

हाल चाल :
रमई काका जन्म शती समारोह, परिप्रेक्ष्य को सही करते हुए, राष्ट्रीय संगोष्ठी, कवीर ग्रंथावली, लोक भूषण, मलिक मोहम्मद जायसी तथा बलभद्र प्रसाद दीक्षित सम्मान।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार - कार्यालय अवध भारती संस्थान - लोक कला मंच लोक सदन नरौली, बीजापुर (हैदरगढ़) बाराबंकी - 225 124
लखनऊ कार्यालय : 610/112, ए केशवनगर, सीतापुर रोड, लखनऊ-226 020
मो. 9450063632, e-mail : awadjyoti@gmail.com, salmanansari7@gmail.com

राम जोहारि

चौराहे पर ठाढ़ि किसनऊ

अवधी के निराला बंशीधर शुकुल की कविता कै ई कड़ी 'चौराहे पर ठाढ़ि किसनऊ ताकैं चारिउ वार देस का को है जिम्मेदार? हमरे लोकतंत्र की बेवस्था पर सवाल उठावत हैं। किसान का अन्नदाता, गांव कै देउता, दुनिया कै पेट भरैया अउ धरता मैया कइ पुजइया न जानी कतनी कतनी उपाधि से वहिका नवाजा गवा तबौ, आजौ। आजादी के पहिले किसान बेगारी, जमींदारी, सूदखोरी के जाल मां फंसा रहा अब आजादी के बादौ तमामन दुसवारी म आपन गाड़ी झुरही ठठरी के बल पर खैंचत जात है। किसान औ किसानी जुगाधिन से आज तक दलित, शोषित वंचित है यक मेर से देखा जाय गांव जउन कृषि संस्कृति अउ श्रम संस्कृति खातिर जाने पहिचाने जाते रहें आज दुइनौ कै लोप होइ गवा है। खेती अलाभकारी धन्धा होइ गवा। ई खातिर किसान आपन आगम अब अलग देखै लाग। दिल्ली वाली सरकार मनरेगा कै चहै जतना डंका पीटै अउ गांवन मा रोजगार कै सपन देखावै, हकीकत कुछ दुसरै हैं। गांव कै नई पीढ़ी सहर भागत है सुख भोगै नाहीं, दुःख के दिन काटै खातिर। सड़क के फुटपाथ अउ पारिक मा या फिर नारा खोरा के किनारे आपन गुजर बसर करत है। धरती माता वहिकै बिछौना अउ आसमान ओढ़ना। किसान बेचारा गरमी, बरिखा, जाड़े मा रात दिन यक कइ दियत है। खून पसीना यक कइके सबकै पेट भरत है मुला ऊ खुदं भिखमंगा बनि गवा है। किसान अउ किसानी दूनौ पै गरानी है। ई हमरे देश और समाज खातिर अच्छा आगम नाही।

किसान अउ किसानी पर दुइतरफा मार है। पहिल तौ भगवान कै कोप कबौ, पाला, कबौ पाथर, कबौ बहिया, कबौ झूरा, कहौं बाढ़, तौ कहौं पल्लौझार, सव तिना से किसानी कै बंटाधार। खेत कइ जोताई, बिया कै वोवाई, रोपाई, निराई गोंडाई, खाद-पानी, किरवा, फतिंगवा कै दवाई तव कहौं जाय के फसिल तयार होत है। मुला सामकूल घर का आय-जाय तव जानौ। अतनी लागत लगाये के बाद औ जामा गलाये के वाद पांच छ सौ रूपया कै गल्ला देखै के मिलत है। यहै नहीं कउनेव कउनेव साल तौ जतना रूपया लगावा जात है वहिकै यक्कै हींसा कै गल्ला देखै क नहीं मिलत। अब देखौ न पारसाल के बाद आय जगजीवन अहिर चार बिगहा धान लगाइन। भादौं मा दइव तड़कि गवा, नहरौ धोखा दै दिहिस, बिजुली कें बीसन दिन दरसन नहीं भयें। भद्दर जवानी मा धान पैरा होइ गवा खेत झुराय के खाक होइ गवा, दाना से भेंट नहीं खेत साफ करावै मा उप्पर से सात आठ सौ रूपया लागि गवा बेचारे किसान क्रेडिट कारड से करजा लिहिन रहै अब बताऊँ कहाँ से पाटै करजा? लरिका बच्चा काउ खायँ। कपड़ा, लत्ता, पढ़ाई-लिखाई, दवाई-दरमत कसक करैं? है कोऊ सुनवइया? फांसी लगाय के मरिहैं न तौ का करिहैं?

यक अउर बिसंगति! नवधा लरिका बिटिया-बेटवा बी०ए० एमे पास कइ लिहिन। बी०एड०, बी०पी०एड, एल०एल०बी०, पालीटेक्निक, बी०टेक, एम०टेक, जइसन डिगरी लइके गांवन मां सेखी बघारत है। उनसे धेला भरे कै टहल नहीं सपरत। पांड़े दुइनौ दीन से गयें न हेलुवा न माड़ी। दिन भर मोबाइल कै लीड काने मा घुसेरे पान पुकार, श्याम बहार कै पुड़िया झोंकत, फिरत हैं गांव-गेरांव के चाय-पान की गुमटी पर दिन बितावत हैं, अखबार पढ़ि-पढ़ि अउ बतकच्चर कइके। काम के न काज के दुश्मन अनाज के। अब उइ आपन सारी अकिल यही मा लगावत हैं कि बिना हाथ गोड़ डोलाये, पेटे कै पानी हाले बिना कसक जेब खर्चा आवै-न हर चलै न चलै कुदारी बइठे भोजन देयं मुरारी। महतारी-बाप उनकी नजर मा हरवाह चरवाह से बदतर। बेचारे महतारिउ बाप पुरविले जनम के करजी। मरि-मरि के करजा पाटत हैं। अपना यक रोटी यक धोती मा काम चलावत हैं। अउ लरिकन खातिर आपन जामा गलाय के उनकै जरूरति पूरा करत हैं। जब कबौ लरिकन से कमाय धमाय कै बात करत हैं तब उलटे जबाब पावत हैं नौकरी जेब मा नाही धरी। दुइ चार बिगहा बेंचि बिकिन के जुगाड़ करौ तौ नौकरी मिलै अब उनसे को कहे कि जर जमीन महतारी बाप लरिकनै बच्चन खातिर तौ जोगवत हैं मुला लरिका ससुर हैं - परे भुसैले मउज करित है फुहरिन पीसा खाई, का काहू के नौकर चाकर कीच मंझावै जाई। ई तौ आय किसान कै आपन बिथा। आपन बिथा तौ निमरे पतरे सहि लेत हैं। मुला समाज कै रवइया देखि के वहिकै मन मसोसि के रहि जात है। वहिके मन कइ बात वंसीधर दादा अपनी कबिता मा लिखिन हैं -

चौराहे पर ठाढ़ि किसनउ ताकैं चारिउ वार, देस का को है जिम्मेदार?
कहूं न जोति दिया न बाती कोई हित न सखा संघाती
चलै बिकट बौझरा पछहियां उड़ै रथी जस तिनका पाती
उगिलै अंधकार चौगिर्दा सूझि न परै अगार देस का को है जिम्मेदार?

वंसीधंर दादा गांव औ गरीवी, किसानी औ किसानी कै जमीनी सच्चाई उकेरिन हैं। विधायक बने के बादौ उनकै माली हालत चपरासी से गई गुजरी रही। मुला बड़े-बड़े नेता, मंत्री मुख्यमंत्री अउ परधान मंत्री कै बखिया उधेरि के धै दिहिन, उनकै खटिया खड़ी कइ दिहिन। भ्रष्ट राजनीति, मक्कारी, घूसखोरी, सामंती बेवस्था, पूंजीवाद, शोषण अउ नौकरशाही के खिलाफ उइ आगि उगिलिन अउ देश की आजादी खातिर बीसन बार जेल जायके आजादी की लड़ाई कै अलख जगाइन। सच्ची बात तौ ई है कि उइ अवधी के निराला अहीं। उनके एक सौ दसये जनम दिवस के मौका पर पत्रिका कै ई अंक अवधी के सच्चे सपूत का समरपित है। ई अंक के अतिथि सम्पादक है भइया डॉ. दिनेश तेवारी जो वंशीधर दादा पर आधारित शोध किहिन अउ उनकी रचनाधर्मिता के परखैया है। अतने बढ़िया सम्पादन खातिर अवध-ज्योति परिवार उनकै आभारी हैं। सब पाठक लोगन का अंगरेजी साल 2015 औ विक्रम संवत 2072 मंगलमय होय यही कामना के साथे सबका रामजोहारि-

राम बहादुर मिसिर

अतिथि सम्पादक की कलम से...

भईया रामबहादुर मिसिर 'बंशीधर शुक्ल विशेषांक' के सम्पादन कै जिम्मेदारी सौंपिन तो पहिले एक बार मन पछिरा मुला फिर उनके आदेश जानि के हम ई जिम्मेदारी स्वीकार कै लिहेन। बंशीधर शुक्ल के साहित्य पर शोध करै के दौरान उनके समस्त उपलब्ध साहित्य का खूब पढ़े रहेन। जब-तब शुक्ल साहित्य पर हमार लेख पत्र-पत्रिका माँ प्रकाशित होवा किहिस है। तो इ लिहाज से हमरे लिए कुछ नवा नाई रहा। मन माँ ई विशवास रहा कि सम्पादन कै दायित्व निभाय लै जाबै औ भईया रामबहादुर का निराश न होय का परी। किन्तु जस-जस ई दिशा माँ काम आगे बढ़ावा तस-तस लागै लाग कि सम्पादन कै काम अतना आसान नाई है जतना हम समझे रहेन। भईया रामबहादुर के हिम्मत औ धैर्य के प्रति मन श्रद्धा से भरि गवा। आश्चर्य होत है कि कौने बिधे वै पिछले बीस साल से अवधी के उत्थान बदे ई पत्रिका कै अनवरत सम्पादन-प्रकाशन करि रहे हैं।

आपन सामर्थ्य भर ई अंक माँ बेहतर सामग्री संजोवै कै प्रयास किहे हन बाकी तो आप विद्वान् पाठक गन बतइहौ कि अंक कास बन पड़ा है ?

इ अंक के सम्पादन के दौरान तमाम कटु औ निराशाजनक अनुभव भवा तौन आपसे साझा करा चाहित है। हमार दिली इच्छा रही कि अंक माँ बंशीधर शुक्ल के स्वनाम धन्य सुपुत्र सुकवि सत्यधर शुक्ल औ उनके परिवार के सदस्य लोगन कै कुछ संस्मरण शामिल करी ताकि पाठक गन बंशीधर शुक्ल के व्यक्तित्व के तमाम अनछुए पहलू से परिचित होय सकैं। येह्के लिए हम सत्यधर शुक्ल जी से कई-कई बार संपर्क किहेन। उनसे बड़ा विनम्र आग्रह किहेन कि अपने पिता पर वै कुछ लिखैं , मुला खेद है कि वै कौनो सहयोग नाहीं किहिन।

बंशीधर शुक्ल जी की अवधी कवितायें 'लखनऊ विश्वविद्यालय', 'डा० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय' औ कानपुर विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम माँ पढ़ाई जात हैं। हम ई सव विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयन के कई प्राध्यापकन से अनुरोध किहेन कि वै बंशीधर शुक्ल जी पर कुछ लिखें। हमार विचार इ रहा कि अध्यापन के दौरान शायद वै लोग शुक्ल साहित्य के कुछ नए आयाम कै संधान किहिन होंय। दुर्भाग्य ! कि इहौं निराश होय का पड़ा। बार-बार अनुरोध करै के वादौ इ प्राध्यापकगन एक्कौ पंक्ति लिखि कै नाई दै पाइन। यै का पढ़ावत होइहैं कक्षा माँ, भगवानै जानैं।

लगभग एक दर्जन नामी-गिरामी लेखकन के पास हम आपन पुस्तक 'बंशीधर शुक्ल का खड़ी बोली काव्य' औ शुक्ल जी कै तमाम अवधी कविता कै फोटो स्टेट करवाय कै इ अनुरोध के साथ भेजा कि वै शुक्ल जी के साहित्य पर कुछ लिखै, पर इहौं 'नाम बड़े पर दर्शन छोटे' वाला हाल रहा। कइव जने तो आज लिखि देइत है , काल लिखि देइत है, कहि-कहि टरकावा किहिन, लेकिन अंत तक कुछ लिखि कै दै नाई पाइन।

हम बड़े आभारी हन उई सब लेखकन कै जे समय रहते हमैं सामग्री उपलब्ध कराइन। अगर इनके सबके सहयोग न मिलत तो हम भईया रामवहादुर मिसिर के विश्वास पर खरा न उतरि पाइत। खास रूप से कृतज्ञ हन आदरणीय विनयदास जी, श्याम सुन्दर दीक्षित जी, ओम प्रकाश अवस्थी जी के प्रति जे न केवल आपन आलेख समय से दिहिन वल्कि निरंतर फोन कै-कै के हमार हिम्मत बढ़ावा किहिन।

बंशीधर शुक्ल के अवधी साहित्य पर तो आज ले खूब लेखन भवा है लेकिन उनके खड़ी बोली के साहित्य औ उनके अवधी गद्य लेखन पर अनुसंधित्सु लोगन कै सृष्टि विलकुल नाई परी। ई अंक माँ हमार ई प्रयास रहा कि उनके साहित्य के ई पक्ष भी प्रकाश माँ आवै। अंक माँ विनयदास जी कै लेख 'आधुनिक अवधी के प्रेमचंद्र' इ दिशा माँ उल्लेखनीय है।

अंत माँ पुनः भईया रामबहादुर मिसिर के प्रति अनंत आभार कि वै हमैं ई मौका दिहिन जेहसे हमरे अनुभव क्षेत्र कै विस्तार भवा। अंक के प्रति आप सुधी पाठकगन कै प्रतिक्रिया कै प्रतीक्षा रही ......

डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स'
मो. 9559304131

अवधी अकादमी का प्रस्ताव

प्रेषक : अवध भारती संस्थान हैदरगढ़ बाराबंकी

प्रतिष्ठा में,

माननीय मुख्यमंत्री महोदय,

उत्तर प्रदेश शासन

विषय : अवधी अकादमी की स्थापना के सम्बन्ध में।

मानयवर,

आप उत्तर प्रदेश के अत्यंत प्रबुद्ध, संघर्षशील, साहित्य- संस्कृति और कलाओं के सम्बन्ध में उचित समझ रखने वाले ऊर्जावान एवं लोकप्रिय गौरवशाली मुख्यमंत्री हैं। महोदय! आज बोलियों को लेकर देश में एक नया उत्साह तथा अपनी अलग पहचान बनाने की मांग जोर पकड़ती जा रही है। इसके विपरीत अवधी समर्थक राष्ट्र भाषा हिन्दी की समृद्धि और उसके विकास के मार्ग में किसी तरह से अलग पहचान की मांग न करते हुए बल्कि उसकी जड़ों को और मजबूत करने का समर्थन करते हैं।

ध्यातव्य है कि अवधी न केवल उत्तर प्रदेश के पच्चीस जनपदों की लोकप्रिय भाषा है वरन मध्यप्रदेश, बिहार और नेपाल तक के विस्तृत भूभाग में फैली हुई एक महत्वपूर्ण भाषा है। उर्दू भाषी देशों तथा कई अन्य देशों में इसे बोलने और समझने वालों की बहुतायत है। अवधी ने मुस्लिम संतों के सूफी साहित्य और दलितों के पीर के सम्बन्ध में सर्वाधिक रचनायें की हैं। अवधी ने महात्मा मलिक मोहम्मद जायसी, संत कबीर, रहीम और गोस्वामी तुलसीदास जैसे बड़े रचनाकार भी दिये हैं जिनकी स्मृतियां लेकर पूरी दुनिया में प्रवासी भारतीय फैले हुए हैं। ऐसी गौरवशाली भाषा आज संरक्षण, संवर्धन और प्रोत्साहन के अभाव में अपने अस्तित्व के लिए जूझ रही है।

आपसे विनम्र अनुरोध है कि सात करोड़ अवधी भाषा-भाषियों की भी भावनाओं का ध्यान रखते हुए अवधी अकादमी की स्थापना करके हिन्दी की इस महत्वपूर्ण बोली को ऊर्जा प्रदान करें।

औचित्य :

कोई भी बोली शब्दों के माध्यम से भाषा को संस्कार देती है। भाषा दो तरह की होती है एक राजभाषा दूसरी लोकभाषा। राजभाषा खड़ी बोली हिन्दी है जबकि भोजपुरी, अवधी, ब्रजी, कन्नौजी, मैथिली आदि लोक भाषायें है। उ0प्र0 शासन द्वारा भोजपुरी अकादमी की स्थापना अत्यन्त सराहनीय कार्य है। उ0प्र0 की तीन प्रमुख बोलियां अवधी, भोजपुरी और ब्रजी हैं। बोलियों का सम्मान गांवों का सम्मान है। आज पूरी दुनिया में बोलियों के संरक्षण का कार्य प्रमुखता के साथ किया जा रहा है। भारत की आत्मा गांवों में बसती है ऐसे में बोलियों को मजबूत करके गांवों को मजबूत किया जा सकता है। अतः भोजपुरी अकादमी की भांति ही अवधी बोली के संरक्षण हेतु अवधी अकादमी की भी स्थापना हो।

कार्य क्षेत्र :

सम्पूर्ण विश्व जहाँ-जहाँ अवधी की अमर कृति रामचरित मानस तथा सूफी साहित्य विद्यमान हो।

कार्य योजना :

(1) अवधी बोली को प्रादेशिक स्तर पर कार्य व्यवहार में सम्मिलित किया जाय। राजकाज की भाषा भी बनायी जाय। जिस प्रकार तमिलनाडु और केरल में तमिल, कन्नड़ और मलयालम के साथ अंग्रेजी का प्रयोग होता है उसी प्रकार यहाँ भी हिन्दी के साथ अवधी को राजभाषा बनाया जायँ।

(2) आकाशवाणी से 24 घंटे अवधी के चैनल प्रसारित हों।

(3) प्रतिवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अवधी भाषा, साहित्य, संस्कृति और लोक कलाओं के लिए दस पुरस्कार दिये

जायं।

(4) नेपाल राष्ट्र में अवधी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता मिली है तथा कक्षा एक से लेकर हाई स्कूल तक अवधी पाठ्यक्रम तथा अवधी पाठ्य पुस्तकें हैं उसी अनुरूप यहाँ भी अवधी को विद्यालयी पाठ्यक्रम में समाहित किया जाय।

(5) अवधी भाषा-बोली के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं में अंकों का निर्धारण हो।

(6) अवधी विद्वानों, साहित्यकारों लोककलाओं, विदेशों के अवधी भाषी क्षेत्रों में भ्रमण की योजना बनायी जाय।

(7) अवधी शब्द कोष/लोक साहित्य/पाण्डुलिपियों/दस्तावेजों के प्रकाशन की व्यवस्था की जाय।

(8) शोध और सर्वेक्षण वैश्विक स्तर पर किया जाय।

(9) प्रति वर्ष दो राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशन 6-6 महीनों के अंतराल पर आयोजित हों।

प्रशासनिक व्यवस्था :

1. अवधी अकादमी का अध्यक्ष - उ0प्र0 का मुख्यमंत्री तथा मुख्यालय लखनऊ में हो।
2. कार्यकारी अध्यक्ष - मुख्यमंत्री द्वारा नामित
3. प्रमुख सचिव भाषा - सदस्य संचिव
4. प्रमुख सचिव - बेसिक शिक्षा/माध्यमिक शिक्षा/उच्च शिक्षा/सदस्य
5. कार्यालय जिसमें पुस्तकालय, शोधकेन्द्र, प्रेक्षागृह, सेमिनार कक्ष प्रदर्शनी कक्ष, प्रशिक्षण कक्ष, अवधी व्यंजन का विशेष कक्ष।

बजट :

1. पच्चीस एकड़ भूभाग में निर्माण हेतु एक मुश्त 50 करोड़ रूपया पूंजीगत व्यय।
2. लगभग 20 सदस्यीय स्टाफ के लिए वेतन मद में प्रतिवर्ष - दो करोड़ रूपये की धनराशि।
3. कार्यक्रमों/आयोजनों/प्रकाशनों/महोत्सवों/ शोध/सर्वेक्षण के लिए पांच करोड़ रूपया प्रतिवर्ष आवर्तक अनुदान।

नामकरण :

राम मनोहर लोहिया अवधी संस्थान या राम मनोहर लोहिया केन्द्रीय अवधी संस्थान

भवदीय,

डॉ0 रामबहादुर मिश्र
अध्यक्ष- अवध भारती संस्थान
हैदरगढ़ वाराबंकी-225124
मो. 9450063632

प्रतिलिपि : सचिव भाषा एवं संस्कृति उ0प्र0 शासन

संलग्नक : अवधी एक संक्षिप्त परिचय

अवधी एक संक्षिप्त परिचय

अवधी उत्तर प्रदेश में बोली जाने वाली वह सबसे महत्वपूर्ण लोकभाषा है जिसे भारतीय आर्य भाषा की पूर्वी हिन्दी शाखा की सबसे प्रमुख बोली के रूप में जाना जाता है। महाजनपद काल में कोशल महाजनपद भारत का सबसे गौरवशाली और शक्तिशाली राज्य था। यह दो भागों में बंटा था उत्तर कोशल (अयोध्या का आस-पास) तथा दक्षिण कोशल (छत्तीसगढ़ और म.प्र. के कुछ जिले)। अवधी के उत्तर में नेपाली, पश्चिमी में कन्नौजी, दक्षिण-पश्चिम में बुंदेली, दक्षिण में बघेली, दक्षिण पूर्व में छत्तीसगढ़ी और पूरब में भोजपुरी बोली जाती है। बघेली और छत्तीसगढ़ी अवधी की उपबोलियां हैं। अवधी न केवल उत्तर प्रदेश के पच्चीस जनपदों की भाषा है वरन मध्य प्रदेश और बिहार तथा नेपाल की तराई के विस्तृत भूभाग में फैली हुई महत्वपूर्ण भाषा है जिसे भारत के वाहर उर्दू बोलने वाले देशों के लोग भी समझते हैं।

प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी जार्ज ग्रियर्सन ने जब भाषा सर्वेक्षण के आंकड़े प्रस्तुत किये थे उस समय इस भाषा के बोलने वालों की संख्या पौने दो करोड़ के आस पास थी। 1971 की जनगणना की रिपोर्ट के अनुसार अवधी भाषियों की संख्या 3 करोड़ थी। वस्तुतः ये सारे आंकड़े आधे अधूरे हैं। वास्तविकता यह है कि अवधी भाषियों की संख्या 7 करोड़ के आस-पास है। अवधी का पूर्णरूपेण विस्तार 18 जनपदों में है ये जिले हैं फैजावाद, अम्वेडकरनगर, सुलतानपुर, इलाहाबाद, प्रतापगढ़, अमेठी, कौशाम्बी, फतेहपुर, उन्नाव, रायबरेली, लखनऊ, सीतापुर, खीरी, बाराबंकी, बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर, गोण्डा। आंशिक रूप से बोलने वाले जिले हैं- बस्ती, जौनपुर, मिर्जापुर, कानपुर, हरदोई, शाहजहांपुर, बांदा और चित्रकूट। मध्यप्रदेश के सतना रीवां, शहडोल से लेकर नरसिंहपुर, सिहोरा (जबलपुर) तक किसी न किसी रूप में अवधी की व्याप्ति है।

भारत के औद्योगिक नगरों कोलिकाता, मुंबई, दिल्ली, लुधियाना, अमृतसर, अहमदाबाद, बड़ौदा, सूरत तथा नौसारी आदि महानगरों में व्यापक रूप से अवधी भाषी विद्यमान हैं। विहार के मुसलमानी क्षेत्र में अवधी भाषी लोगों की पर्याप्त संख्या है।

भारत के पड़ोसी मित्र राष्ट्र नेपाल की तराई मधेश क्षेत्र अर्थात नारायणी नदी से पश्चिम नवलपरासी, रूपनदेही, कपिलवस्तु, दांग, बांके, बर्दिया, कैलाली तथा कंचनपुर जिले मुख्य रूप से अवधी भाषी क्षेत्र हैं। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार नेपाल में कुल अवधी भाषा-भाषियों की संख्या 560744 (पांच लाख साठ हजार सात सौ) है। नेपाल में 1994 से रेडियो नेपाल से अवधी भाषा में समाचार प्रसारित होते हैं। 2006 के जन आन्दोलन एवं नेपाल आन्दोलन के बाद अवधी को नेपाल में राष्ट्रीय भाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता मिल गयी है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि वहां पर कक्षा एक से कक्षा पांच तथा कक्षा 9 एवं 10 के लिए नेपाल शिक्षा विभाग द्वारा अवधी का पाठ्यक्रम तैयार किया गया और पाठ्य पुस्तकें भी प्रकाशित हुई जो ''हमार भाषा अवधी'' के नाम से हैं। यही नहीं अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों में प्रौढ़ों और नवसाक्षरों के लिए उनकी मातृभाषा अवधी में पाठ्य पुस्तकें तैयार की गयी हैं। इसके साथ ही नेपाल की सबसे बड़ी साहित्यिक संस्था नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान द्वारा अवधी के लिए एक प्रकोष्ठ बनाया गया है जिसमें अनुवाद व्याकरण तथा पाठ्यक्रम सम्बन्धी कार्य होते हैं। नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान तथा नेपाल के शिक्षा विभाग द्वारा अवधी के विकास और प्रचार-प्रसार के लिए अलग से बजट की व्यवस्था हैं। नेपाल के अवधी साहित्यकारों द्वारा महाकाव्य खण्डकाव्य, निबन्ध, कहानी, उपन्यास, अनुवाद सहित अनेकानेक विधाओं में अवधी सर्जना हो रही है।

अवधी जिसकी पहचान गंगा जुमनी संस्कृति के लिए विश्वविख्यात है वह अवध और अवधी के कारण ही है। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच एकता भाईचारा, प्रेम और साम्प्रदायिक सौहार्द स्थापित करने में अवधी का विशेष योगदान है। भाषा के अभिजात्य रूप के खिलाफ लोक भाषा का मान-सम्मान सूफी सन्तों के द्वारा ही हुआ। अवधी का अधिकांश मूल्यवान साहित्य मुसलमान सूफी सन्तों तथा श्रमिक वर्ग के दलितों और पिछड़ों द्वारा लिखा गया। अवधी में सूफी सन्तों की एक लम्बी परम्परा रही है।

भारत में प्रेमाख्यान परम्परा वैसे तो बहुत पहले से है जो संस्कृत भाषा से प्रारम्भ होकर राजस्थानी तत्पश्चात् अवधी में आयी लेकिन प्रेमाख्यान परम्परा को ख्याति अवधी ने ही दिलायी। अवधी के प्रेमाख्यान फारसी कविता की मसनवी शैली में लिखे गये। यही कारण है कि अवधी के प्रेमाख्यान अन्य भाषाओं से अलग दिखते हैं। अवधी के पहले प्रेमाख्यानक मुल्ला दाऊद (चन्दायन) हैं। शेख कुतुबन (जौनपुर) की मृगावती के अलावा सपनावली, मृगावती, प्रेमावती, मधुमालती, यूसुफ जुलेखा आदि हैं जिनमें सबकी सिरमौर जायसी का पद्मावत है। जायसी के बाद उसमान की चित्रावली, कासिमशाह की हंस जवाहिर, नूर मोहम्मद की इंद्रावत और अनुराग बांसुरी, शेख नबी की ज्ञान दीप, जनकवि की रत्नावली और रतनमंजरी हुसेन अली की पुहुपावती, ख्वाजा अहमद की नूरजहां, अलीमुराद की कथा कुबरायल मोहम्मद नसीम की प्रेमदर्पण जैसी प्रेमगाथायें लिखी गयीं।

हिन्दी साहित्य की प्रमुख पांच धाराएं हैं जिनमें प्रेमाख्यान काव्य संत काव्य, राम काव्य, कृष्ण काव्य और रीति काव्य है। इनमें से तीन धाराओं प्रेमाख्यान, रामकाव्य तथा संत काव्य का इतिहास तो अवधी से ही है। शेष कृष्णकाव्य और रीति काव्य भी अवधी में रचे गये हैं। अवधी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसने ब्रज भाषा के रचनाकारों की भांति राजाओं महाराजाओं का गुणगान नहीं किया। मुगल, नवाबी और अंग्रेजी शासन काल में अवध में बीस के आस पास तालुका और रजवाड़े थे किन्तु अवधी का कोई कवि दरबारी नहीं हुआ। वस्तुतः अवध और अवधी का आधार है राम और राम कथा जिसने पूरी दुनिया में भारतीय दर्शन, चिन्तन और अध्यात्म की ध्वजा फहरायी।

फार्म-4 नियम-8 देखिये

1. प्रकाशन का स्थान	:	नरौली हैदरगढ़, बाराबंकी - 225124
2. प्रकाशन अवधि	:	त्रैमासिक
3. सम्पादक का नाम	:	डॉ0 रामबहादुर मिश्र
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	नरौली हैदरगढ़, बाराबंकी - 225124
4. मुद्रक एवं प्रकाशक का नाम	:	डॉ0 रामबहादुर मिश्र
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	नरौली हैदरगढ़, बाराबंकी - 225124
5. स्वत्वाधिकार	:	डॉ0 रामबहादुर मिश्र नरौली हैदरगढ़, बाराबंकी - 225124

मैं डॉ0 रामबहादुर मिश्र घोषित करता हूं कि उपरोक्त विवरण मेरे विश्वास एवं जानकारी से सही हैं।

दिनांक - 30 मार्च 2015 ह. प्रकाशक/सम्पादकः डॉ0 रामबहादुर मिश्र

पं. बंशीधर शुक्ल : एक विराट महामानव

ओम प्रकाश अवस्थी*

यदि गलामी के दिनों की बात करें तो जिसने आम जन की धमनियों में जमे ठण्डे खून को अपनी तपती कविताओं द्वारा सबसे ज्यादा उबाला और खौलाया था य दीन से दीन और हीन से हीन में आजादी की खातिर मर-मिटने का जूनून भर दिया था, हर हाल में वह स्वाधीनता समर सूरमा प. बंशीधर शुक्ल के सिवा और कोई हो ही नहीं सकता। दुनिया भर का इतिहास गवाह है कि क्रांतियाँ सदा कलम से ही आई हैं। शब्द संसार के सबसे दाहक अंगारे होते हैं और शब्द धाराएं सबसे मारक मिसाइलें, जिनकी चमक और धमक से मुर्दा से मुर्दा दिलों में विस्फोट हो जाता है और कायर से कायर भी महासाह्सी और शौर्यवान बन जाते हैं। वैसी अनगिनत मिसाइलों से पूरे देश में तहलका मचा देने वाले श्री शुक्ल के बारे में जितना भी कहा जाए, कम है।

वस्तुतः कोई भी व्यक्ति तभी खरा साहित्यकार व जननायक हो सकता है जब समाज या राष्ट्र की वेदना उसकी अपनी वेदना बन जाए। इस सृष्टि से देखा जाए तो शुक्ल जी सच्चे अर्थों में कलमकार व जननायक थे। वेदनाओं का यही सम उनकी अपनी संवेदनाओं में साफ परिलक्षित होता है। राष्ट्र की शर्मनाक गुलामी को वे विस्फारित नेत्रों से ताक रहे थे जबकि बहुसंख्य जनमानस सोया पडा था। ऐसे में सर्वप्रथम उन्होंने सोतों को जगाने का बीड़ा उठाया और उद्घोष कर पड़े -

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है वो खोवत है, जो जागत है वो पावत है।

x x x

उठो सोने वालों सबेरा हुआ है
वतन के फकीरों का फेरा हुआ है।

फिर क्या था ! ये जागरण गीत बच्चे-बच्चे की जुबान पर चढ़ गए। हर कोई इन्हें गाता और गुनगुनाता फिरने लगा। और जब गाँधी अनुगूंज को यह लय प्राप्त हो गई तो पूरे राष्ट्र में तूफान उठ खड़ा हुआ। सिंहासन हिलने लगे, अंग्रेजों के दिल दहलने लगे और उनका दमनचक्र चलने लगा। किन्तु सिंह भला डरने वाला कहाँ था। उसने भी गर्जना कर दी-

बना खड़ा आसमान धुएं से बंदूकों के फायर की
खून उबल पड़ता है एकदम करतूत याद कर डायर की।
सारी दुनिया तुझे बचावे फिर भी मार गिराउंगा।
जब तक तुझको मिटा न दूंगा चौन न किंचित पाउँगा।

शुक्ल जी की इस गर्जना ने गीदड़ों तक में शौर्य-साहस का संचार कर दिया। कल तक जो जुबान खोलने तक से कतराते थे , वे खुलेआम क्रान्ति का गीत गाने लगे। अंग्रेजों ने लाख सितम ढाए पर कारवाँ जुड़ता गया , बढ़ता गया , लड़ता रहा और मर-मिटता रहा। स्वाधीनता की उस जंग में सिद्धांतों के कुछ संशय घिर आये। शुक्ल जी ने उनकी नब्ज टटोली। उन्हें लगा की अहिंसा को विजयी बनाने के लिए वांछित हिंसा भी खुद में अहिंसा है। तब उन्होंने बिगुल बजा दिया

यह छटा नहीं युग जागृति की ,
यह ज्वाला की अंतड़ियां हैं।
सुशान्ति यहाँ से बचकर चल ,
ये महाक्रान्ति की घड़ियाँ हैं।

x x x

जब क्षत्र उलटते जाते हों ,
साम्राज्य पलटते जाते हों ,
कीड़ों से कटे मनुष्य देश के
देश उजड़ते जाते हों ,

उस समय अहिंसा-सत्य-शान्ति का पाठ पढ़ाना ठीक नहीं।

इस बिगुल के बजते ही संशय का कुहासा तार-तार हो गया और पूरी की पूरी युवा पीढी बेखौफ बगावत पर टूट पड़ी तो अंग्रेजों के छक्के छूटने लगे।

वर्तमान उपभोक्ता संस्कृति में रची-बसी आज की युवा पीढ़ी क्या जाने की आजादी के उस भीषण महासमर में चंद्रशेखर आजाद , भगत सिंह , बिस्मिल और सुभाष चन्द्र बोस जैसों के साथ-साथ भारत माता के कितने-कितने नौनिहालों की शहादत इतिहास के पन्नों से अछूती ही रह गई। उन अनामो का कोई नामों-निशाँ तक

*मोहल्ला- माधवरेती , जगतापुर नगरव जिला बहराइच -271801 उत्तर प्रदेश

नहीं। खुद के लिए उन्होंने कुछ पाना चाहा ही न था। हमारे पूर्वजों की उसी त्याग-संस्कृति की चट्टान पर आज उपभोक्ता संस्कृति की अट्टालिकाएं सीना ताने सारी दुनिया को आँख से आँख मिलाकर देखने का अवसर पा सकीं हैं। किन्तु कितना त्रासद है की हम अपनी उस गौरवशाली त्याग और बलिदान की परम्परा को ही भुला बैठे। खैर हम अपने अतीत के उसी कालखंड में फिर लौट चलते हैं। जिस तीव्रता से देशभक्तों की कुर्बानियों का सिलसिला बढ़ता गया उसी तेजी से अंग्रेजों का दमनचक्र। किन्तु वह भारत को आजाद होने से कैसे रोक पाता जब एक-एक सूरमा सवा-सवा लाख पर भारी पड़ रहा था। आखिरकार वह बहुप्रतीक्षित घड़ी आ ही गयी। देश के करोड़ो लोगो की खुशी का ठिकाना न रहा की अब उनके लिए खाने को रोटी होगी, पहनने को कपड़े और रहने को मकान और आजाद परिंदों की तरह खुली हवा में उड़ने-चहकने की आजादी। मगर हमारे नव शासक-प्रशासक सत्ता मद में सब कुछ भूलते चले गए। वे उन बलिदानियों को भी भूल गए जिनकी बदौलत उन्हें सत्ता नसीब हुई थी। उन्हें बस इतना ही याद रहा की कैसे जल्द से जल्द अपनी झोली भर लें। नतीजा ये निकला की मालिक बदल गए पर गुलाम वहीं के वहीं रह गए। भला शुक्ल जी को ऐसी स्थिति कैसे संहन हो पाती। उन्होंने सत्ताधीशों की अवसरवादिता का साफ-साफ खुलासा कर दिया

अब मत समझो समाजवादी, ये पक्के अवरारवादी है,

साथ साथ जनता को आगाह करने से भी नहीं चूके -

क्षण-क्षण उलट-पलट करने से, जनता के सचेत रहने से,
शासक अंध न्याय भी करता प्रबल विरोधी दल बनने से
जो न विरोधी हों तो शासक करता अत्याचार।
पलटिये बार-बार सरकार।

उधर सरकार का आलम ये था की उसका सारा खेल कागजों पर ही चलता जा रहा था। योजनाओं पर योजनायें बनती रहीं। कागज पर आंकड़े बढ़ाए जाते रहे। लम्बे-चौड़े वायदे और उपलब्धियों का ढिंढोरा पीता जाता रहा। तंत्र तले जनता पिसती रही जबकि स्वतंत्रता समारोह बड़े धूम-धाम से मनाये जाते रहे। ऐसे में शुक्ल जी की कलम कहाँ खामोश रहने वाली थी

उत्पादन वृद्धि बताने में आंकड़े बढ़ाए जाते हैं।
भूखों मरता देश राज्य में प्लान बनाए जाते हैं।
भूखों की हंसी उड़ाने को क्या यही रह गया एक अस्त्र ?
तुम क्यों आये पंद्रह अगस्त ?

स्वाधीनता के बाद भी शुक्ल जी का क्रांतिकारी मन कभी संतोष की सांस न ले सका। जब सभी सत्ता से मिलवाँट कर अपना उल्लू सीधा करने में लगे थे, वह क्रांतिकारी कवि -सेनानी गरीब-दुखियों व शोषितों के बीच भटकता फिरता रहा। उसकी बस एक ही पीड़ा थी की कैसे उन बदनसीबों का शोषण थमे। उसके प्रभु राजभवनों में नहीं, खेतों-कारखानों और गाँवों की मड़य्या में बसते थे।

राजनीति में आयी सड़न से क्षुब्ध होकर उसने फिर से बगावत कर दी। विधानसभा में बैठकर ही उसने उसके खिलाफ मोर्चा खोल दिया और गर्जना कर दी

बगावत है किसी मजलूम की फरियाद सुन लेना,
बगावत है किसी के दर्द पर आंसू बहा देना,
बगावत है किसी भटके हुए को राह दे देना,
तो मैं भी एक बागी हूँ बगावत काम है मेरा।

शासक वर्ग हतप्रभ रह गया की शाख पर बैठा ये कैसा कालिदास है जो अपनी ही डाल पर कुल्हाड़ी चलाये जा रहा है। किन्तु वह कालिदास तो माँ भारती और शारदा दोनों का लाडला था। माता के अंक में वन्देमातरम के गीत गुनगुनाता ही रहा

राग और रहमान की यादें भी होती हैं कभी,
किन्तु दिल हर वक्त यह गाता है वन्देमातरम।

फिर हारकर सत्ताधीशों ने उन्हें बड़े से बड़े प्रलोभन दे डाले की वे अपनी कलम और जुबान को खामोश कर लें। लेकिन भला ऐसा कहाँ संभव था। महान आत्माएं अपने जमीर का सौदा नहीं किया करतीं। सत्ता पक्ष की इस कुटिल चाल पर उनका जमीर चीख पड़ा

आज की सरकार स्वाहा लीडरी दरबार स्वाहा।
धूर्त, कायर, खल ठगों का कांग्रेसी व्यभिचार स्वाहा।

ये तो था उस फक्कड़ क्रांतिकारी मसीहा का एक पक्ष, अब हम उस विराट महामानव के दूसरे पक्ष पर आते हैं। वह अवध की सोंधी माटी में खिला ऐसा फूल था जिसकी खुशबू पूरे राष्ट्र में दूर-दूर तक जा रही थी। देश के करोड़ों कंठ जिन अमर गीतों को सदा गाया और गुनगुनाया करते थे, उनमें बहुतों को पता ही न था कि इन गीतों को लिखा किसने है, क्योंकि इनके रचयिता में

न प्रदर्शन की ललक थी न प्रचार पाने की लालसा।

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि भारत माता का पुत्र कहलाने के लिए पहले हमें अपनी जन्मदात्री माता का महत्त्व स्वीकारना होगा। यदि हम अपनी जन्मभूमि के न हुए तो राष्ट्रभूमि के क्या होंगे ! कितनी विडंबना है की आज का कलमकार अपनी आँचलिकता को ताक पर रखकर सार्वभौम होने के सपने देखता है। इससे वड़ा सच और क्या होगा की कोई लाख भुलाना चाहे , पर कभी माँ न भुलाए भूलती है न वह जुबान , जिसमें हमने सबसे पहले तुतलाना सीखा। फिर भी जाने क्यों , लोग दोनों को भुलाए रखने का स्वांग रचते रहते हैं। किन्तु शुक्ल जी माँ शारदा के ऐसे कुपूत न थे।

यद्यपि उन्होंने जनजागरण व जनक्रांति के अधिकाँश गीतों का सृजन प्रायः खड़ी बोली में ही किया, क्योंकि स्वाधीनता आन्दोलन के राष्ट्रव्यापी फलक को देखते हुए ऐसा करना आवश्यक था। तथापि उन्होंने अपनी मातृभाषा अवधी में भी काव्य की ऐसी धारा बहाई कि पूरा देश वाह-वाह कर उठा और वे अवधी-सम्राट के पर्याय बन गए। और जब अवध और अवधी की चर्चा हो तो सर्वप्रथम हम हिन्दी साहित्य के महानतम अवधी सम्राट गोस्वामी तुलसीदास को नमन करते है जिन्होंने स्वयं संस त-प्रकांड होकर भी विश्वविख्यात रामचरित मानस की रचना अपनी मातृभाषा अवधी में ही की थी। उन्हीं की बदौलत अवधी दुनिया के कोने-कोने में जा पहुँची। उस जीवंत महाकवि ने चौहत्तर वर्ष की अवस्था में मानस जैसे सर्व पूज्य अवधी महाकाव्य की रचना कर डाली, जिसे सारे संसार ने सिर्फ गाया और गुनगुनाया ही नहीं , अपने सर माथे से लगा लिया। ऐसे महाकवि को कोटि-कोटि प्रणाम, जिसकी बदौलत हम सीना तान कर कह सकते हैं कि हम अवध के हैं और अवधी हमारी। उन्हीं गोस्वामी जी के सच्चे उत्तराधिकारी थे पं. बंशीधर शुक्ल जिन्होंने पांच सौ वर्ष बाद अवधी की उस भागीरथी को भारत में फिर से बहा दिया जिसमें भाव-विभोर होकर लोग डुबकी लगाने आये थे। इसी के चलते शुक्ल जी भी हमारे लिए उतने ही प्रणम्य हैं जितने गोस्वामी जी। मातृभाषा के इन दोनों महापुत्रों को हमारा कोटिशः नमन।

अउर अब चलती बेरिया तनि हमहूँ आपनि महतारी के अँचरा मा मुहँ लुकुवाय लेई। माई ते हम अतना तो कहिबे करव-

ओ हमार महतारी ! आज हमका अपने अँचरा मा छिपाय लेव। हम तुमते आपन जियरा कै सब हाल बतैइबै। पहिले हमका लय चल्यो राजापुर मा। हुआँ हमका मिलवाय दिहेव गुसाईं दद्दा से। उनते कहिबे , तुम्हार लिखी रामायन तौ हम साँझ-सकारे पुजते हन दद्दा , तौ कवहूँ हमका अवधेस कै उ चारि लारिकनौ ते मिलवाय देव , जे तुम्हरे जियरा मा सदा वास करत हैं। उनहिन कै कथा चरित्तर मा तौ हमार प्रान बसत हैं। फिर हमका लई चल्यो मन्यौरा गाँव मा माई। हुआ मिलिबै अपने सुकुल दद्दा ते। वहै तो आय तुम्हार छोटकए पूत। उनहू ते हमका चिन्हवाय दिहेव माता। उनते कहेव, इ तुम्हार छोटकवा लछमन होय। इका आपन राम मड़इया सुनाय देव। तव हमहूँ उनते कहिवे, ओ हमार दद्दा, तुम का-का सोचे रहेव मुल हियाँ देखौ , का-का होत चला गा। आपन बिधैकी मा न तुम कुरता बदल पाए रहेव न कुरतवक जेव। आपन मड़य्या का जस-तस छोड़ि तुम हियाँ से बिदा होइगे रहेव दद्दा। मुलु आजु के बिधायक तौ पांचै बरस माँ अरवपति होइ-होइ जात हैं। कहैक तौ बहुतै कछु है मुल स्वाचित हन कि ई सब सुनि कै तुम गुन्ना मा परि जैहौ दद्दा। तौ हम अतनै कहित है कि अबकी जब आयेव तौ कलम संगे आपन तलवारियौ लिहे आयेव।

ओ हमार महतारी, अतनी बतकही तौ हम अपने शुकुल दद्दा से करिबै करब। माई का कही, ई दूनौ भैयन कै बतकहिन भर ते हमार दुनहूँ अँखियाँ भरि-भरि आवति हैं। सोचित है वैसन सपूत तुम्हरी कोख ते अब काहे नाइ पइदा होत हैं अम्मा ! मुलु हमका आसौ है बिस्वासौ है कि दुनहूँ जने याक दफा फिर ते अइहैं जरूर, गुसाईं दद्दा बजरंगबली संगे औ सुकुल दद्दा लिहे अइहैं अपने संगे चहलारी वाले नर-नाहर बलभद्दर भईया का। गाँधी बाबा जौन रामराज केर सपना देखिन रहैं ऊ तब्बै पूर होय पाई अम्मा। याकु वतिया तौ तुमते कहहिन का रहिगा माई , तुम हमका उनहूँ ते मिलवाय दिहेव जे सब महतारिन कै महतारी हैं। जिनके जयकारा करत सुकुल दद्दा सदा गावत औ गुनगुनात रहैं

जय-जय अम्ब भारत धरणि।

अवधी सम्राट पं. बंशीधर शुक्ल को याद करते हुए

राहुल देव*

अवधलोक की वृहद्त्रयी में से एक जनकवि बंशीधर शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के लखीमपुर (खीरी) जिले के मन्यौरा गाँव के एक कृषक परिवार में वसंतपंचमी के दिन सन 1904 ई. को हुआ था। इनके पिता पं. छेदीलाल शुक्ल कर्म से कृषक और हृदय से कवि थे। वह अपने क्षेत्र में आल्हा गायक के रूप में प्रसिद्ध थे। अपने आसपास के इस अनुकूल परिवेश का प्रभाव बालक बंशीधर शुक्ल पर भी पड़ा। सन 1919 में पिता की मृत्यु हो जाने के बाद पारिवारिक जिम्मेदारियों का भार अल्पायु में ही उनके कन्धों पर आ पड़ा। पिता की असामयिक मृत्यु से शुक्ल जी की विद्यालयीय शिक्षा कक्षा आठ तक ही हो सकी। बाद में घर पर ही उन्होंने स्वाध्याय से संस त-उर्दू-हिन्दी-अंग्रेजी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। जीविका के लिए कुछ समय के लिए उन्होंने पुस्तक व्यवसाय का कार्य भी भी किया। इसी बीच वह कविताएं भी लिखने लगे। पुस्तक व्यवसाय से जुड़ने के कारण उनका अक्सर कानपुर आना-जाना होता था। इसी दौरान वह गणेश शंकर विद्यार्थी के संपर्क में आए और उन्हीं की प्रेरणा से वह सन 1921 में राजनीति में सक्रिय हुए। सन 1938 में आप ने लखनऊ में रेडियों में नौकरी भी की। जीवनसंघर्षों ने कवि बंशीधर शुक्ल के व्यक्तित्व और कृतित्व को धीरे-धीरे जीवंत और जीवट बना दिया। शुक्ल जी ने बापू के नमक आंदोलन से लेकर आजाद भारत में लगाई गयी इमेर्जेन्सी में भी जेल यात्रायें की। खूनी परचा, राम मड़ैया, किसान की अर्जी, लीडराबाद, राजा की कोठी, बेदखली, सूखा आदि रचनाये उस दौर में जनमानस में खूब प्रचलित रही। आजादी कें बाद 1957 में पं. बंशीधर शुक्ल लखीमपुर क्षेत्र से विधायक बने। अपने राजनीतिक दौर में भी वह बेहद सादगी के साथ रहे। 1978 में शुक्ल जी को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने 'मलिक मोहम्मद जायसी पुरस्कार' से सम्मानित किया। बाद में संस्थान नें इस जनकवि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनकी रचनाओं का समग्र संकलन रचनावली के रूप में भी प्रकाशित किया। आजादी के सिपाही और अवधी साहित्य के अनन्य उपासक बंशीधर शुक्ल ने 76 वर्ष की आयु में अप्रैल सन 1980 में इस दुनिया को अलविदा कह दिया।

समाजवादी रुझान के शुक्ल जी की रचनाओं में विषयगत विविधता है। गरीब और किसान वर्ग की व्यथा-कथा से तो इनका काव्य भरा पड़ा है । ऐसी ही उनकी एक मार्मिक कविता 'अछूत की होरी' को देखें तो,

"हमैं यह होरिउ झुरसावइ।
खेत बनिज ना गोरू गैया ना घर दूध न पूत।
मड़ई परी गाँव के बाहर, सब जन कहैं अछूत
द्वार कोई झँकइउ ना आवइ। हमैं यह ..।
ठिठुरत मरति जाड़ु सब काटित, हम औ दुखिया जोइ।
चारि टका तब मिलै मजूरी, जब जिउ डारी खोइ,
दुःख कोई ना बँटवावइ। हमैं यह ..।
नई फसिल कट रही खेत मा चिरइउ करैं कुलेल।
हमैं वहे मेहनत के दाना नहीं लोनु न तेल,
खेलु हमका कैसे भावइ। हमैं यह ..।
गाँव नगर सब होरी खेलैं, रंग अबीर उड़ाय।
हमरी आँतें जरैं भूख ते, तलफै अँधरी माय,
बात कोई पूँछइ न आवइ। हमैं यह ..।
सुनेन राति मा जरि गइ होरी, जरि के गई बुझाय।
हमरे जिउ की बुझी न होरी जरि जरि जारति जाय,
नैन जल कब लैं जुड़वावइ। हमैं यह ..।
हाड़ मास जरि खूनौ झुरसा, धुनी जरै धुँधुवाय।
जरे चाम की ई खलइत का तृष्णा रही चलाय,
आस पर दम आवइ जावइ। हमैं यह ..।
यह होरी औ पर्व देवारी, हमैं कछू न सोहाइ।
आप जरे पर लोनु लगावै, आवै यह जरि जाइ,
कौनु सुखु हमका पहुँचावइ। हमैं यह ..।
इगरी सगी बिलैया, कुतिया रोजुइ घर मथि जाय।
साथी सगे चिरैया कौवा, जागि जगावैं आय,

*9/48 साहित्य सदन, कोतवाली मार्ग, महमूदाबाद (अवध) सीतापुर (उ.प्र.)

मौत सुधि लेइउ न आवइ। हमैं यह ..।

कवि के सामाजिक सरोकारों और उसकी जनपक्षधर सोच को दर्शाती यह कविता 1936 में लिखी गयी थी। ध्यातव्य है कि हिंदी साहित्य जगत में वह समय प्रगतिशील चेतना के उभार का दौर था। ऐसे में शुक्ल जी अवधांचल में इस तरह की कविता लिख रहे थे। यानि कि उन्हें अपने समय का भलीभांति ज्ञान था तभी उनकी रचनाएँ लोगों को प्रभावित कर सकने में सफल हो पातीं थीं। दुखद है कि इस सन्दर्भ में उनका समग्र मूल्यांकन न हो सका। आलोचकों द्वारा उनकी रचनाधर्मिता को लेकर लगातार उपेक्षा की गयी। प्रश्न यह है कि क्या क्षेत्रीयता आलोचना में रूकावट डालने का कोई मापदंड थी, विचार करें तो हम पाते हैं कि ऐसा नहीं है। सोचिये अगर ऐसा होता तो तुलसी बाबा साहित्य जगत में आज कहाँ पर होते ? हिंदी पट्टी के कई प्रतिभाशाली कवियों के साथ यह दोहरा व्यवहार हुआ। अवधी, ब्रज, मैथिली, राजस्थानी, मगधी, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, बुन्देलखंडी आदि हिंदी की तमाम सारी बोलियाँ हैं। फिर आलोचकों का यह पूर्वाग्रह समझ से परे है। उन्हें समझना होगा कि हिंदी भाषा अगर एक वृक्ष है तो उसकी बोलियाँ उसकी शाखाएं हैं जिसे उससे अलग नहीं किया जा सकता। अन्य लोगों की तो छोड़ दीजिये अब तो अंचलों के लोग भी अपनी भाषा के प्रति जागरूक नजर नहीं आते। वैश्वीकरण और भाषाई दुराग्रह से आज बोलियाँ भी अपने अस्तित्व से जूझ रही हैं। हमारी अस्मिता पर मंडराता यह संकट गंभीर है इसे सभी को समझना होगा।

इसके अतिरिक्त 'उठो सोने वालों सबेरा हुआ है. .' जैसी पंक्तियाँ हों या 'उठ जाग मुसाफिर भोंर भई..' जैसी कालजयी कविता । 'उठ जाग मुसाफिर भोर भई' कविता से मेरा पुराना नाता है क्योंकि बचपन में अक्सर सुबह सुबह घर पर माता जी या पिता जी इस गीत को गाया करते थे। शुक्ल जी अपने समय में बहुत लोकप्रिय कवि रहे थे। उनके इसी योगदान को लेकर आज भी हम उन्हें सम्मान के साथ याद करते हैं। जनमानस में उनकी लोकप्रियता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता था कि अवध के गाँव-गाँव में लोगों को उनकी रचनाएँ जबानी याद थीं।

जीवन-जगत की तमाम स्थितियों-परिस्थितियों ने उनमें व्यवस्था के प्रति विद्रोही स्वर पैदा किया था। उस समय देश में स्वतंत्रता आन्दोलन अपने चरम पर था। इस सवका प्रभाव कवि बंशीधर शुक्ल पर भी पड़ा और वे स्वतंत्रता आन्दोलन में अपनी सक्रिय भागीदारी करते हुए अनेक बार जेल गये। शुक्ल जी वैचारिक स्तर पर कहीं न कहीं गाँधी जी से भी बहुत प्रभावित थे। गाँधी जी को याद करते हुए लिखी गयी उनकी 'गाँधी बाबा के बिना' शीर्षक यह कविता सृष्टव्य है,

"हमरे देसवा की मँझरिया ह्वैगै सूनि,
अकेले गाँधी बाबा के बिना।
कौनु डाटि के पेट लगावै, कौनु सुनावै बात नई,
कौनु बिपति माँ देय सहारा, कौनु चलावै राह नई,
को झँझा माँ डटै अकेले, बिना सस्त्र संग्राम करै,
को सब संकट बिथा झेलि, दुसमन का कामु तमाम करै।
सत्य अहिंसा की उजेरिया ह्वैगै सूनि,
अकेले गाँधी बाबा के बिना।"

उन्होंने स्वतंत्रता से पहले अगर अंग्रेजों की खिलाफत की तो वहीं स्वतंत्रता मिलने के बाद लोकतंत्र के समाजवादी विरोधी चेहरे को देखकर उन्होंने यह भी कहा, *"ओ शासक नेहरु सावधान, पलटो नौकरशाही विधान अन्यथा पलट देगा तुमको मजदूर, वीर, योद्धा, किसान।"* उनकी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि व साफगोई यहाँ स्पष्ट है।

शुक्ल जी ने हिंदी और अवधी दोनों में लेखन किया। अवधी उनकी मातृभाषा थी। उन्हें भान था कि लोगों के बीच अपनी बात रखने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम उनकी अपनी भाषा-बोली में ही संभव है इसीलिए उन्होंने एक सच्चे जनकवि की भांति अपना अधिकतर लेखन लोकभाषा अवधी में ही किया।

उनकी एक प्रसिद्ध कविता 'महंगाई' को देखें,

"हमका चूसि रही मंहगाई।
रुपया रोजु मजूरी पाई, प्रानी पाँच जियाई,
पाँच सेर का खरचु ठौर पर, सेर भरे माँ खाई।
सरकारी कंट्रोलि कै गल्ला हम ना ढूँढे पाई,
छा दुपहरी खराबु करी तब कहूँ किलो भर पाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।"

समग्र लोक चेतना के राष्ट्रीय कविः पं0 वंशीधर शुक्ल

कोमल शास्त्री*

अपार काव्य- संसार में अवधी कविता की गंगा गोमुख से निकलकर कालक्रमानुसार आधुनिक काल तक एक लम्बा सफर तय करते हुये मैदानी भाग को विस्तार देने और रसाप्लावित करने में कोई कसर नहीं रखना चाहती। जन-जीवन की साझेदारी में उनके रोजमर्रा के मसाइल से भली भाँति परिचित अवधी राष्ट्रीय चेतना की ओर समर्पण के साथ अग्रसर है। यद्यपि जायसी और सन्त महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जैसे पुण्य पुरूषों के आविर्भाव ने अवधी को जो महान गरिमा और स्थैर्य प्रदान किया है वह लोकोत्तर , वर्णनातीत है। उन्होंने अवधी को बहुत कुछ दिया तो अवधी ने उन्हें भी बहुत कुछ दिया। यही कारण है कि वे अवधी कविता के सिरमौर बने हुये हैं। उनके मस्तक से अवधी का अभिराम मुकुट कभी उतरने वाला नहीं है। शायद ही कोई सत्पुरूष फिर पैदा हो ? मध्यकाल में ब्रजभाषा के साथ अवधी भाषा भी कदमताल करती रही किन्तु देश , काल परिस्थितियों के अनुसार ब्रजभाषा श्री कृष्ण का आश्रय पाकर कुछ अधिक ही चमत्कारी सिद्ध हुई । लेकिन स्वतंत्रता आन्दोलन की काव्य प्रवृत्तियों के नये उभार और उत्थान की हलचलों ने हिन्दी के साथ अवधी भाषा में जिस ऊर्जा का संचार किया उससे अवधी भाषा के सपनों को क्षितिज के पार तक जाने को पंख लग गये। इसके आरम्भिक स्वर्णिम काल को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र युग रेखांकित और महिमा मंडित करता है।

हिन्दी की भाँति अवधी ने भी कई सोपान गढ़े हैं। विभिन्न काव्य-धाराओं को लाँघते हुये भारतेन्दु काल के अन्त और द्विवेदी युग (१६००-१६२५) के आते-आते कई अवधी के महान कवियों का आविर्भाव हुआ औंर पं0 रामचन्द्र शुक्ल के समय तक उनमें से कई राष्ट्रीय आन्दोलन की जमीन पर खड़े राष्ट्र-भक्ति का झण्डा थाम चुके थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के 'निज भाषा' वाले महामंत्र के अनुयायी कवि, त्यागी सत्पुरुषों ने कलम को अपना हथियार बनाया और तत्कालीन समाज की विद्रूपताओं के जिम्मेवार गोरे जिन्नों को ललकारा ''कोमल कवि की कलम को दिखलाओ मत तोप , इसकी स्याही में भरा शिव का महा प्रकोप।'' और सचमुच शिवशक्ति ने वही कर दिखाया जो जनाकांक्षा थी जिसके लिये राष्ट्र रक्त रंजित हो चुका था।

मैनें ऊपर शुक्ल काल में जिन महान कवियों के आविर्भाव की ओर संकेत किया उनके और उनके समूह-काल को डॉ0 श्याम सुन्दर मिश्र 'मधुप' ने अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ में वृहद्त्रयी युग से अभिहित किया है। जिसके अन्तर्गत कई स्वनाम धन्य कवि स्वतंत्रता आन्दोलन के साक्षी रहे हैं। किन्तु कुछ नाम तो केवल खानापूर्ति करते हैं और जगह घेरते हैं। वृहद्त्रयी के तीन प्रमुख कवियों के नाम हैं- पढ़ीस जी , पं0 बंशीधर शुक्ल और चन्द्र भूषण त्रिवेदी 'रमई काका'। यहाँ मैं पं0 वंशीधर शुक्ल के महनीय काव्य-व्यक्तित्व में समाहित समग्र लोक चेतना एवं राष्ट्रीय भावना पर किन्चित सृष्टि निक्षेप का सुअवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहता।

हमारे देश में अवतारों एवं महापुरूषों के नाम पर जातकों के नामकरण की परम्परा रही है। जहाँ तद्नुरूप् गुण-धर्म के अभाव में बहुधा बहुतों के नाम बेमानी लगते हैं वहीं कतिपय के उनके सद्गुणों एवं सत्कर्मो के कारण सार्थक प्रतीत होते हैं । वंशीधर शुक्ल एक ऐसा ही सार्थक् नाम है जो युगों तक स्मरण किया जायेगा । जिनकी काव्य रसमाधुरी और ग्राह्यता जिज्ञासु जनों का विनोद , मार्गदर्शन करती रहेगी। जो किसानों, शोषितों , पीड़ितों किंवा जड़ीभूत समग्र लोक चेतना की काँपती , मद्धिम लौ को उकसाने और स्नेह भरने वाले राष्ट्रभक्त क्रान्ति दूत के रूप में पीढ़ियों का पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे। प. बंशीधर शुक्ल की काव्य रस माधुरी यदि एक ओर लोक चेतना को हवा के झोंकों के विपरीत नचाती है तो दूसरी ओर आततायियों के प्रति विद्रोह का गगन भेदी स्वर मुखर कर

आशा निलय, इन्द्रलोक कालोनी, शहजादपुर, अकवरपुर, अम्बेडकर नगर(उ0प्र0)

उसे लामबंन्द भी करती है और लोहा लेने का सामर्थ्य उत्पन्न करती है। मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि वीरत्व का संचार करने के लिये , जन-जन में ओज-उत्साह भरने के लिये रस माधुरी पहली शर्त है जिसे शुक्ल का सारस्वत-उपक्रम किसी हद तक पूरा करने के लिय आतुर है। चाहे कोई कलम वीर हो या तलवार वीर। वीरता जब तक रस से सराबोर न हो तब तक शोभा नहीं पाती। मैं अपने कथन के समर्थन में श्री शुक्ल को ही उपस्थित करना उचित समझता हूँ -

जहाँ बजै रैदास के ढपली, नाचौं कुँवर-कन्हैया।।

कंस वध के लिये कुँवर-कन्हैया का नर्तन आवश्यक नहीं अनिवार्य है। कवि का यही रसाह्लाद जन-जन को उद्वेलित करने , षडयंत्रकारियों के विरुद्ध जन भावनाओं को उभारने , उत्साह और उमंग की भीड़ के साथ उद्दीप्त सूर्य-प्रभा को जमीन पर उतारने को लालायित 'प्रभात फेरी' कराता है। स्वर संगीतमय जन-जागरण का सन्देश घर-घर पहुँचाता है-

उठो सोने वालो सबेरा हुआ है
वतन के फकीरों का फेरा हुआ है।।

****

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कंहाँ जो सोवत है।।

ध्यातव्य है कि सोने वाले (राष्ट्रीय चिन्ता से बेखबर) मुसाफिरों को आत्मीयता भरा यह संदेश पहरेदार के रूप में कोई जालिम नहीं बल्कि फकीर दे रहा है और कवि सचमुच फकीर होता है। कवि की संवेदना, वसुधैव कुटुम्बकम् की सद्भावना, भौतिक अमीरी के भूत से निर्लिप्त होती है। फकीर कभी हिंसक नहीं होता और वह भी 'अवध' का। इस बाने को गाँधी वादी अहिंसक क्रान्ति द्वारा , तानाशाही एवं सामन्ती व्यवस्था की प्रतीक 'राजा की कोठी' को ध्वस्त करने के लिये शोषित जनता के आह्वान के परिप्रेक्ष्य में भी देखा जाना चाहिये। बंशीधर इन्द्र के ऐसे गोवर्धनों का मान-मर्दन करने के लिये मनसा, वाचा, कर्मणा कटिबद्ध हैं।

यह ध्यान रहे किसी भी सृजन के पीछे सृजन सर्जक के मनमोहक और उन्नत चरित्र का पक्ष ही सबल होता है। अधर्म मूलक शक्तियों का उन्मूलन, भारतीय संस्कृति का स्थापन, नियमन, संरक्षण शुद्ध चैतन्य आत्मा ही करने को उद्यत एवं अग्रसर होती है। अतएव पं0 बंशीधर शुक्ल कभी निशस्त्र उपदेष्टा तो कभी युयुत्सु सेनानी के रूप् में दृष्टिगोचर होते हैं। कर्म विरक्ति जैसी कायरता उन्हें कदापि स्वीकार्य नहीं , अन्याय बर्दाश्त नहीं। तभी तो राष्ट्र हित में वे कह सके हैं कि चुप रहना कायरता हैं क्योंकि हक चुपचाप बैठे रहने से नहीं मिलता अतएव लक्ष्य के लिये लड़कर शहीद हो जाना अमरता है। "अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अपना सारा शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक बल लगा दो।"- कारलाइल के इस कथन को अमल में लाने से नहीं चूकते। वे देश का दुर्भाग्य पलटने, जनगण में साहस-शक्ति भरने के लिये सभक्ति याचना के स्वर निवेदित करते हैं। परम सत्ता का स्वीकार्य ही 'सर्व विघ्नोपशान्ताये' का मूल मंत्र है। यही कारण है कि भारतीयता, श्वेताम्बरा , पीताम्बरा और ऋतंभरा है। लोक संस्कृति के साथ भारत की वैदिक संस्कृति को धारण करने में शुक्ल जी पीछे नहीं हैं ।

कवि के मन में युयुत्सा का भाव अनायास नहीं है अपितु उसे घुट्टी में मिला है। घोर संक्रमण काल के वातावरण में जन्म लेना और उस वातावरण के प्रभाव से अछूता रहना किसी भी जातक के लिये असंभव है । प्रस्तुत है कवि की यह स्वीकारोक्ति -

"हम क्रान्ति काल में जन्मे रण रंग हमें अति प्यारा।"

कितनी सच्चाई , सफाई और निश्छलता से लबरेज है कवि का अन्तर्मन। क्रान्ति काल में जन्म लेने वाले शुक्ल कितने शुक्ल हैं ? वे किसी धन्ना सेठ की कोठी में नहीं पैदा हुये हैं । एक गरीब किसान के छोटे से अभावग्रस्त घर में पैदा हुये हैं । वे गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारत माँ की उस बेटी के गर्भ से पैदा हुये हैं , जो अपनी ही चहारदिवारी में कैद थी। गृह कलह भी कम नहीं था। खून निचो लेने वाली गरीबी किसी पूतना से कम नहीं होती। दैन्य और अभाव ज्ञानी और विद्वज्जनों को भी सुदामा बना देता है , लेकिन जो जन्मना सुदामा हो उसके दुःख का पारावार नहीं। मैं अपनी प्रकाशित कृति 'जीवन का सच' की चार पंक्तियाँ उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ , क्योंकि शुक्ल जी का जीवन संदर्भ इनसे मेल खाता है -

'शिशु काल मरा है जवानी मरी
दुख मेरे ही हाथों से पाले गये।
सब सुन्दर एक से एक बने,
जैसे रूप् के सांचे में ढाले गये।।
चुकता ही रहा चलता ही रहा,
कभी पांवों को छोड़ न छाले गये।
जितने भी अभाव रहे जग में,
सब मेरी ही झोली में डाले गये।।'

कहना समीचीन होगा कि इन्हीं अभावों की पीड़ा ने वंशीधर को 'बंशीधर' बना दिया। 'जाके पांव न फटी बिवाई, ऊ का जानैं पीर पराई , इसी अनुभूति ने उन्हें सर्वहारा का कवि ,ग्राम्य जीवन का कवि , प्रकृति का कवि , लोक और लोक वेदना का कवि और क्रान्तिदर्शी राष्ट्रीय कवि कुल मिलाकर यथार्थ का महाकवि बना दिया। और तो और इसी पीड़ा ने उन्हें महात्मा गाँधी की प्रार्थना का 'राम मड़ैया' वाला परम वैष्णव बना दिया। श्री शुक्ल लोक जीवन और लोक व्यवहार में रचे-बसे थे तो लोक-जीवन, परलोक व्यवहार और लोक भाषा इनमें रची-बसी थी। दोनों को पृथक करने की कोशिश अन्धता स्वीकार करने का प्रमाण प्रस्तुत करना है । शुक्ल जी पाँच सितारा होटल या काफी हाउस में बैठकर कविता लिखने वाले कवि नहीं थे , अपितु राह चलते लिखने वाले, वहाँ के कवि थे जहाँ कविता का उत्स फूटता है। कालजयी कवितायें स्वतः स्फूर्त होती हैं । वही गाँवों के देश भारत की महिमा है। इनकी दुनिया भी बड़ी अलबेली थी। किसान की दुनिया भी दुःख-दर्द की दुनिया थी। तभी तो इस दुनिया का हर कौतुक हर कौतूहल इनकी आँखों में समाया था। हृदयाकाश में जलापूरित मेंघों-सा छाया था। इनकी अनुभूति कितनी सघन थी , इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। सरसों के ढेर के दाने गिनने जैसा है।

इसके अतिरिक्त वंशीधर शुक्ल का एक और प्रबल पक्ष उभरता है। स्वतंत्रता आन्दोलन के अहिंसक महासमर में राजनीतिक सूझ-बूझ और सक्रियता का। रूचि होते हुये , राजनीतिक बने बिना स्वयं में अधूरा लगता है। सम्बल मिला गणेश शंकर 'विद्यार्थी' जी का। फिर तो इस क्षेत्र में भी इन्होंने झंडा गाड़ दिया। स्वतंत्रता सेनानी के लिये जेल यात्रा आश्चर्य जनक घटना नहीं है। देश के अनेक स्वततंत्रता सेनानियों ने देश को बहुमूल्य साहित्य जेल की कोठरियों से ही खोज कर, निकाल कर दिया है। भला वंशीधर शुक्ल जैसा नैसर्गिक कवि कहाँ पीछे रहने वाला था। उनके लिये बन्दीगृह छापा खाना था। जेल की दीवारों से लेकर कागज के कोरे पन्नों तक उन्होंने अनेक राष्ट्रीय रचनायें साहित्य कोश को अर्पित कीं। उनके सपनों में अगर कुछ था तो केवल 'आजाद भारत', सर्वे भवन्तु सुखिनः का 'निष्कलंक भारत'। ऐसी कल्पना और कल्पनाओं को साकार करने की दृढ़ प्रतिज्ञा तो कोई वंशीधर ही कर सकता है -

कोई भी जुल्म करे हम पर,
हम कष्ट झेलने निकले हैं,
हम कफन बाँध कर भारत को
आजाद कराने निकले हैं ।

यही है देश-प्रेम । यही है देश प्रेम की भावना का चरम "कार्य वा साधयेयं शरीरं वा पातयेयम" की प्रतिज्ञा। अनन्य भक्ति का ह्रदय में अंकित सबूत। शुक्ल जी कभी पीछे मुड़कर देखने या ठोकरों से घवरा कर भागने वाले कापुरूष नहीं थे। उनका पौरूष अकूत था। जिधर को चले नया रास्ता बन गया। यदि उन्हें दृढ़ता का हिमालय कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। शायद इसी दृढ़ता और दरिया दिली को जीवनभर जीने वाले कवि को आजाद भारत की रोशनी में लखीमपुर क्षेत्र की जनता ने सिर आँखों पर बिठाये रखा और लोकतंत्रीय व्यवस्था में आस्था के साथ अपना नुमाइन्दा वनाया।

श्री शुक्ल जी का वैशिष्ट्य कागज के दो-चार पृष्ठों में अंकित करने एवं पढ़ने की अपेक्षा अच्छा होगा उनको विस्तार से पढ़कर समझना और वंशी की धुनों को आत्मसात करना। गागर में सागर का कुछ जल तो समा सकता है , सागर नहीं।

रोटिन मां माटी मिली खाऊँ तो कसकै,
अधचुरी दालि का कहौं कहाँ तक मसकै।
कँकरी दाँतै पर परै कड़ाका व्यालै,
झलरा तरकारी जरी नरी तक छ्वालै।
हरहन का खाना बिवस भूख मा खावा,
बन्दी खाने ते छूटि बुधइया आवा।।

लक्ष्मण प्रसाद मित्र

पंडित बंशीधर शुक्ल का राष्ट्रवादी यथार्थबोध

डॉ0 श्याम सुन्दर दीक्षित*

पं0 बंशीधर शुक्ल का रचना संसार नितांत श्लथ और आसवित है। उनकी अनुभूतिजन्य सघन लयात्मकता एवं संवेदनीयता को किसी चौखट में आवद्ध करना दुष्कर कार्य है। उनकी कविता विचलित करती है , झकझोरती है, प्रश्न खड़ा करती है क्योंकि उनकी कविता में निहित शब्दार्थ की सत्ता अनुभूति के तादात्म्य हेतु सह-अनुभूति उत्पन्न करती है और पाठक का साधारणीकरण भी। इसी विंदु पर श्री शुक्ल जी का काव्य सामाजिक संस्था का रूपाकार ग्रहण करता है। इसी रूपाकार ग्रहण में वे अपनी परम्परा और इतिहास की निरंतरता विकसित करते हैं . इस निरंतरता से एक सर्वसमावेशी मूल्य दृष्टि का प्रस्फुटन अनायास ही हो उठता है।

श्री शुक्ल की कविता समय सापेक्ष होते हुए भी अपने समय का अतिक्रमण करती है। ऐसा होने का कारण उनकी वैचारिक गतिशीलता थी, जो उनकी अन्यतम जनपक्षधरता से व्युत्पन्न है। इसी गतिशीलता की उष्मा ने समय की चट्टानों पर जमी बर्फ को पिघलाया और एक नयी गंगा को उद्‌गमित करने का प्रयास किया जिसमें राष्ट्रप्रेम , सांस्कृतिक चिंता और दुखदैन्य से कराहते हुए मनुष्य को दुलारने की , शीतल करने की तथा अक्षुण्ण अमृतत्व की कामना सन्निहित है। श्री शुक्ल के इस काव्य प्रवाह में अनेक पड़ाव हैं . कदाचित ठहराव भी . किन्तु यह ठहराव जड़ता नहीं प्रत्युत किंचित रुककर समय एव. दृष्टि की पड़ताल है , जो उनके वर्तमान के मूल्यांकन में सहायक तो है ही भविष्य के लिए भी कम लाभदायी नहीं है। उनकी कविता का प्राप्त स्वरुप इन्हीं ठहरावों में ही सुधरा है और यहीं परदुखकातरता को पुष्ट आयाम मिले जो पहले अंग्रेजी साम्राज्य से और फिर प्रजातांत्रिक शासन से वैचारिक धरातल पर दो-दो हाथ करने में सहायक सिद्ध हुए।

श्री शुक्ल की कविता का केन्द्रक मनुष्य है। उसके हर्ष , विषाद , साहस , दैन्य , करुणा-वत्सलता और उसकी जिजीविषा का आख्यान ही उनकी कविता का प्रतिपाद्य है। उनकी खड़ी बोली की कविताओं में प्रकृति एवं अन्य अवयव सहचर के रूप में ही हैं क्योंकि उनका विस्तारीकरण प्रांजलता ही पैदा करता है। इसके पीछे भी उनका उद्देश्य था सबका हित साधन , सामाजिक समरसता , दोष-दलन तथा सर्वथा पूर्ण मानव मूर्ति की स्थापना , एक आदर्श समाज का प्रतिदर्श उपस्थित करना , जहां "नहिं भय शोक न रोग" चरितार्थ होता है। उनका समूचा काव्य इसी मानव विजय का , मनुष्यता की रक्षा का और मानवीय गौरव का महा आख्यान है।

श्री शुक्ल का रचनाकाल बींसवी शताब्दी के लगभग छह दशकों को आच्छादित किये हुए है , यह समय उपनिवेशवाद का पतनोन्मुख और स्वाधीनता के प्रथम आन्दोलन से उपजी ऊर्जा के सम्प्रसार के प्रकर्ष का था , गाँधी स्वाधीनता आन्दोलन की बागडोर संभाल चुके थे। इसी समय बंशीधर शुक्ल की कविता संक्रमित हुयी , जिसने जन चेतना को सामाजिक , सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में अन्तसंग्रथित कर राष्ट्रीयता का स्वर मुखरित किया . यहाँ यह स्मरण रखना अनिवार्य है की यह राष्ट्रीयता व्यापक उदारवादी तथा मानवतावादी थी।

श्री शुक्ल सुख-सुविधा संपन्न अन्यों की तरह कोरे कवि ही नहीं थे , प्रत्युय उनके व्यक्तित्व के निर्माण में क्रांतिधर्मिता,आन्दोलन- कारिता, राष्ट्रीयता के लिए सर्वस्व समर्पण, समाजवादी सोच तथा कुछ कर गुजरने की इच्छा के रसायनों का प्रचुर सहमेल है। उनकी कविता कथनी भर नहीं बल्कि करनी का भी अंग है। उनकी साधारण कद-काठी में बसने वाले उनके अमर प्राण काल के हुताशन में भी शिथिलित न होकर समरांगन में शक्ति तौलते हैं

फनिकों के वासन में सिंहों के आसन में ,
अम्बु के प्रपातन में काल के हुताशन में ,
मेरे चिर अमर प्राण रन से मत शिथिलित हो ,
भू के समरांगन में समर शक्ति तोलो तो।

श्री शुक्ल का समूचा काव्य "उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य

---

*सत्यनाभ विधापीठ, ग्वारी रोड , सुगर मिल, बाराबंकी

वरान्निबोधत" का उद्घोष है। उनकी कविता में उद्बोधन है तो संबोधन भी है और श्रेष्ठ तत्व की पूर्ण प्राप्ति की कामना भी। इसीलिये उनके उद्बोधन गीतों को देशभक्त एवं सत्याग्रहियों ने अपना कंठहार बना लिया था

उठो सोने वालों सबेरा हुआ है।
वतन के फकीरों का फेरा हुआ है।

श्री शुक्ल की काव्य प्रतिभा का अनुमान मात्र इतने से ही लगाया जा सकता है की गाँधी जी भी उनकी कविता "उठ जाग मुसाफिर भोर भाई , अब रैन कहाँ जो सोवत है" को नित्य प्रति प्रार्थना सभा में गाया करते थे। यह वही गाँधी जी हैं जिन्होंने रवींद्र ठाकुर को काव्य-गुरु की उपाधि से अभिषिक्त किया था। तात्पर्य यह है की श्री शुक्ल की काव्य सादगी , गहन सन्देश और उच्चाशय से संपृक्त कथ्य युग-पुरुषों को भी प्रभावित करता है। यह श्री शुक्ल और उनकी कविता की तासीर है जो कभी कबीर ने आध्यात्मिक क्षेत्र में प्राप्त की थी उसे श्री शुक्ल ने भौतिक धरातल पर मनुष्य को संबोधित करते हुए पाया है। शब्दाडम्बर से दूर मानवीय संवेगों से पूर्ण पंक्तियाँ देखिये-

लड़ना वीरों का पेशा है , उसमें कुछ भी न अंदेशा है ,
तू किस गफलत में पडा-पडा आलस में जीवन खोवत है।
है आजादी ही लक्ष्य तेरा उसमें अब देर लगा न जरा ,
जब सारी दुनिया जाग उठी तू सर खुज्लावत रोवत है।

श्री शुक्ल केवल उदबोधन ही नहीं देते हैं , उनका संबोधन भी अपने आप में अनूठा है। उनका संबोधन केवल उपदेश नहीं प्रत्युत सह अस्तित्व में कुछ कर गुजरने की चाहत है। "आ पगले गदर मचाएं" और "पलटिये वार-बार सरकार" जैसी रचनाएं इसकी साक्ष्य हैं। इसी क्रम में "बनाओ मियाँ न पाकिस्तान" , "जवानो हो जाओ तैयार" , तथा "ओ शासक नेहरु सावधान "कवितायेँ उनके संबोधन की अप्रतिम कवितायें हैं। जैसा की सब जानते हैं श्री शुक्ल प. नेहरू का आदर करते थे, उनके प्रति बेहद सम्मान भाव था , किन्तु श्री शुक्ल ने व्यक्ति शुक्ल को कभी कवि शुक्ल पर हावी नहीं होने दिया और एक कवि की समूची तटस्थता के साथ नेहरू जी को संबोधित करते हुए न केवल उन्हें आगाह किया बल्कि उनकी राजनीतिक भूलों को भी इंगित किया है। और इस संबोधन में उमड़ते उनके मनः भाव एक बार जहाँ इतिहास खंगालते हैं वहीं स्वाधीनता संग्राम सेनानियों तथा हुतात्माओं के प्रति भी श्रद्धा से नत उनका मन अद्भुत विक्षोभ , विवशता , दैन्य तथा संताप से भरा दिखाई देता है। इसीलिये उनका स्वर उद्वेग की द्वंद्वात्मकता में कह उठता है

तुम उस भारत के शासक बन ,
भारत की नाक कटाते हो।
यह क्या कायर-सी आदत है ,
लड़ने से दम दुबकाते हो।
क्या भूल सकेगा कभी विश्व ,
भारत महान की बहादुरी।
लड़ने , मरने , श्रम करने में ,
कौन कर सका बराबरी।
जाओ उतरो दिल्ली छोडो ,
आनंद भवन में करो नृत्य।
क्यों भारत देश उजाड़ रहे ,
कर-कर अनीति कर-कर कुकृत्य।

इसी क्रम में उनका प्रस्थान गीत जिसे आजाद हिन्द फौज ने अपनाया और अपना प्रयाण गीत बनाया "कदम कदम बढाए जा" का भी जिक्र आवश्यक है,क्योंकि यह उनकी सहज भाषा , भावों के संवेग तथा संवेगों के सम्प्रसार का अद्भुत नमूना है। उनकी इस काव्य सिद्धि के पीछे उनकी चारित्रिक विशेषता "सूधो मन सूधो वचन सूधी सब करतूति" रही है जिसे गाँधी स्वीकारते हैं तो सुभाष भी मानते हैं। क्योंकि इसके पीछे थी राष्ट्र निष्ठा की अक्षुण्णता और स्वतंत्रता प्राप्ति की उत्कट कामना तथा शीघ्रताशीघ्र लक्ष्य पा लेने की लालसा। तभी तो कवि कह उठता है

जहां तलक न लक्ष्य पूर्ण हो समर करेंगे हम ,
खड़ा हो शत्रु सामने तो शीश पै चढ़ेंगे हम ,
विजय हमारे हाथ है विजय ध्वजा उड़ाए जा।
कदम-कदम बढ़ाए जा खुशी के गीत गाये जा।
ये जिंदगी है कौम की तू कौम पे लुटाये जा।

- श्री शुक्ल की एक कविता 'खूनी-पर्चा' स्वयं में दस्तावेजी कविता है। यहाँ यह कहने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं है की यदि श्री शुक्ल ने प्रभूत काव्य का सृजन न भी किया होता तो भी यह अकेली कविता उन्हें इतिहास

पुरुष बनाती। इसमें भी श्री शुक्ल के राष्ट्रभक्त मन की , क्रांतिकारी कर्म की और निर्भयता की त्रिवेणी है। कविता में जहाँ भारतीय समृद्ध विरासत को अंग्रेजों द्वारा छिन्न-भिन्न करने , लूटने , बांटने की कुत्सित नीति के प्रति वितृष्णा और तितिक्षा है वहीं भारतीय क्रांतिवीरों का श्रद्धापूर्ण नमन और स्मरण भी है। यह कविता स्वयं में कोप और करुणा की अद्‌भुत मिसाल है। इस लम्बी कविता में शुक्ल जी ने वीर भाव बोधी धरातल पर 'नवीन' और 'दिनकर' को भी पीछे छोड़ दिया है। कविता के प्रारम्भ में ही अंग्रेज और अंग्रेजी राज्य के लिए प्रयुक्त विशेषण उनके आक्रोशित उद्वेग की जहाँ सघनता बताने के लिए पर्याप्त हैं वहीं उनकी मुक्ति की छटपटाहट भी अपने प्रकर्ष पर है -

अमर भूमि से प्रकट हुआ हूँ मर-गर अमर कहाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूंगा चैन न किंचित पाऊँगा।
तुम हो जालिम दगाबाज मक्कार सितमगर अय्यारे ,
डाकू चोर गिरहकट रहजन जाहिल कौमी गद्दारे।
खूंगर तोतेचाश्म हरामी नाव्कार औ बद्‌कारे ,
दोजख के कुत्ते खुदगर्जी नीच जालिया हत्यारे।
अब तेरी फरेबबाजी से रंच न दहशत खाऊँगा।

श्री शुक्ल केवल क्रान्तिधर्मी कवि ही नहीं थे अपितु तन-मन भी उन्होंने स्वाधीनता आन्दोलन को समर्पित कर दिया था। इसके लिए उन्होंने अनेकशः जेल यातनाओं को झेला। किन्तु यह वीर सेनानी कैसे रुक सकता था क्योंकि उनके लिए जेल घर और घर जेल सरीखा हो गया था। रण बिगुल उन्हें प्रमत्त कर देता था "बज गया बिगुल बज गया बिगुल , बज गयी वीर रणभेरी"। और इस मादकता में उनका जागतिक भय उनसे कोसों दूर ही रहता था। न घर की चिंता न स्वयं की। चिंता और इच्छा थी तो केवल एक राष्ट्र की पराधीनता से मुक्ति। एक बार जेल में बंद होने पर भाई द्वारा माफी याचना के लिए कहने पर उन्होंने बड़े ही विनोदी स्वर में भाई को काव्यात्मक उत्तर दिया था-

धैर्य धरो जेलर ससुर की सुता के साथ ,
चंद दिन में ही तो स्वराज्य लिए आते हैं।

श्री शुक्ल का व्यक्तित्व एवं तित्व पूर्णतः पारदर्शी था। उनके मन प्राण में मनुष्य मात्र की पीड़ा अपनी थी और इसके लिए वे राजनीतिक छल , दंभ और स्वार्थ तथा सत्ता की भूख को दोषी मानते थे। आजन्म उन्होंने अपने कर्म और कविता से उन्हीं का प्रतिकार किया। बीसवीं सदी के लगभग साठ वर्षों तक उन्होंने मनुष्य और उसकी अस्मिता उनके जीवन के संघर्षों तथा तज्जनित प्रकाश-अन्धकार, नैतिक चिंता, स्वप्न, परिवर्तन और सच्चाइयों का साक्ष्य उपस्थित किया। तभी तो महादेवी वर्मा जैसी विदुषी उन्हें 'अवधी का निराला' कहकर संबोधित करती थीं।

श्री शुक्ल अवधी हिन्दी के एक मात्र ऐसे कवि हैं जिनके काव्य में केवल कविता ही नहीं अपितु भारतीय इतिहास भी अन्वेषित किया जाता है।



बरवै

प्रकृति सुहाग सजाइस पियरी धार।
बिन पति सून सिंगरवा भा पतझार।।
भौरी भरिन भंवरवा रस बस झूमि।
दुर्दिन देखि न चितइन बेलिन घूमि।।
चैत चांदनी चौगुन भा परगास।
आवा मधु मन भावा लै मधुमास।।
घमवा रूचै न अमवा झूमै बौरि।
फिर मधुकर मधु लोभी आए दौरि।।
देखतै मधुमासौ बदलिस रंग।
ऊखम बनी बयरिया दूखम अंग।।
रतिया सजग सुरतिया छतिया छीजि।
दिन मां पोंछि पसिनवा अंचरा भीजि।।
जहाँ-जहाँ रस बरसा रस-रस रांच।
हुँआ धूरि की करचैं परचैं आँच।।
जेठ मास दुपहरिया चिलबिल घाम।
बरसै गगन अंगरवा झरसैं चाम।।

गुरु प्रसाद सिंह मृगेश

आधुनिक अवधी के प्रेमचंद : बंशीधर शुक्ल

डॉ0 विनयदास *

अवधी की पहली कहानी और शुक्ल जी

अब तक की खोजों से यह प्रमाणित हो चुका है कि आधुनिक अवधी कहानी का प्रारम्भ सन १६१५ ई. में हुआ। अवधी की पहली कहानीकार मोहिनी चमारिन हैं जो लिंग के आधार पर महिला तथा जाति से दलित वर्ग की हैं। उनकी कहानी 'छोट के चोर' इलाहाबाद से प्रकाशित 'कन्या मनोरंजन पत्रिका' में सन १६१५ ई. में छपी थी जिसके सम्पादक ओंकारनाथ बाजपेयी थे।

अवधी के पहले कहानीकार के सन्दर्भ में प्रायः लोग पढ़ीस जी के संग्रह 'लामजहब' की कहानियों का हवाला देते हैं , किन्तु तथ्य यह है कि उस संग्रह में अवधी भाषा में उनकी कोई भी कहानी नहीं है। इस तथ्य के आधार पर वे अवधी भाषा के प्रयोक्ता तो माने जा सकते हैं लेकिन अवधी भाषा के मुकम्मल कहानीकार नहीं। आधुनिक अवधी काव्य के चार स्तम्भ वलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस , बंशीधर शुक्ल , चंद्रभूपण त्रिवेदी 'रमई काका' तथा गुरु प्रसाद सिंह 'मृगेश' में केवल शुक्ल जी और रमई काका का अवधी गद्य के विकास में अप्रतिम योगदान है। अगर कथा साहित्य की बात करें तो आज की तारीख में रमई काका की न तो कोई कहानी उपलब्ध है और न तो उनका उपन्यास 'कलुआ बैल' ही , जो स्वतंत्र भारत सुमन में धारावाहिक रूप से छपा था। दिलचस्प तथ्य यह भी है कि उनके साहित्य के उत्तराधिकारी सुपुत्रों के पास भी यह नहीं है। ऐसी स्थिति में हमारे सम्मुख अवधी के समर्थ कहानीकार के रूप में सिर्फ बंशीधर शुक्ल और उनकी नौ कहानियाँ भर हैं , जो बंशीधर शुक्ल ग्रंथावली में हमें प्राप्त हैं , किन्तु गणेशशंकर मिश्र ने अपने शोध ग्रन्थ 'अवधी का गद्य' में उनकी दो अन्य कहानियों 'नौकरी का भाड़ा झोंका' तथा 'मेले का मजा' का उल्लेख किया है। अगर इन दो कहानियों को और जोड़ दें तो उनकी कहानियों की संख्या ग्यारह हो जाती है। प्रमाण के अभाव में ऐसा कहना कठिन है। रचनावली में इनके न शामिल होने से मधुप जी के पास इनकी अप्राप्ति की ही संभावना बनती है। खैर ! इससे उनकी कहानियों के मूल्यांकन पर कोई खास फर्क नहीं पड़ता , क्योंकि अपने शीर्षक से वे काजी का नौकर के ज्यादा करीब प्रतीत होती हैं।

शुक्ल जी का जीवन : कहानी के लिए चुनौती

बंशीधर शुक्ल एक साधारण किसान थे। वे छोटी काश्त के काश्तकार थे। उनकी विधिवत शिक्षा कक्षा-आठ तक हुई थी। उन्हें कविता तथा पुस्तक से अधिक लगाव था। कविता का गुण उन्हें अपने पिता पं. छेदीलाल शुक्ल से विरासत में मिला था। उनके इसी पुस्तक प्रेम नें उन्हें लखीमपुर में पुस्तक की दूकान खोलने को विवश किया। यहाँ बिक्री भी अच्छी होती थी। शुक्ल जी का कंठ निराला था। सो वे नैमिपारण्य आदि पड़ोस के मेलों में गा-गाकर अपनी कविता पुस्तकें दो-दो पैसे में खूब बेचते थे। इसके पीछे उनकी रूचि के साथ , उनके परिवार की आर्थिक जरुरत भी थी। खेती में उन दिनों पैदा ही कितना होता था ?

शुक्ल जी स्वभावतः गरम दल के समर्थक थे। कालान्तर में वे गांधीजी , उनके राष्ट्रवादी आन्दोलन और कांग्रेस की नीतियों/कार्यक्रमों से प्रभावित हुए। फलतः उनकी कविता का स्वर राष्ट्रवादी हो गया।वे स्वतंत्रता और कांग्रेस का प्रचार गली-गली करने लगे। अंग्रेज सरकार के मुखर विरोधी हो गए। सो जेल इनके लिए दूसरा घर हो चला था। लेकिन जब सन १६४७ ई. में आजादी के बाद जब स्वतंत्रता सेनानियों को विभिन्न महत्त्वपूर्ण पद दिए जाने लगे तो उस लिस्ट में इनका नाम खारिज था। इसके पीछे इनका मुहँफट होना था। ये वे ही बंशीधर शुक्ल थे जिन्होंने गाँधी जी के एक इशारे पर अपनी रेडियों की नौकरी छोड़ दी थी। कांग्रेस के भेदभावपूर्ण रवैये से नाराज हो उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी। वे समाजवादी हो गए। तदुपरांत उनकी कविता का मुख्य स्वर कांग्रेस का विरोध हो गया। वे जनता के सच्चे हिमायती थे इसलिए उनकी कविता में व्यवस्था के प्रति विरोध-प्रतिरोध मुखर हुआ। अब कवि सम्मेलनों में उनकी माँग बढ़ गयी। वे सन १६५८ से १६६२ तक उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य

---

*पटेल नगर , दशहराबाग, निकट- पंचमदास कुटी, जनपद- बाराबंकी।

रहे। उनकी अवधी साहित्य सेवा के लिए मृत्यु से दो वर्ष पूर्व सन १६७८ में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उन्हें 'मालिक मुहम्मद जायसी' पुरस्कार से सम्मानित किया।

यह विवरण अनावश्यक नहीं क्योंकि इसी में उनकी कहानियों के स्रोत विद्यमान हैं। सच तो यह है कि बंशीधर शुक्ल की प्रतिभा मूलतः काव्यात्मक थी। उनके मस्तिष्क का उत्तम प्रदेश उनकी कविता है। किन्तु मेरे विचार से उनके साहित्यिक प्रदेश का अभिनंदनीय पक्ष उनकी कहानियां भी हैं जो कविताओं से कमतर नहीं। किन्तु न जाने क्यों उनकी इन अवधी कहानियों के प्रति ड०. श्याम सुन्दर मिश्र 'मधुप' और शुक्ल जी के बेटे सत्यधर शुक्ल ने एक-सी चुप्पी साधी है। शायद इसका कारण इन कहानियों की संख्या की अल्पता हो या फिर इन महानुभावों ने शुक्ल जी के काव्य के सम्मुख उनकी कहानियों को कमतर आँका हो। मगर इससे भी हटकर यह कहना ज्यादा सच होगा कि ये दोनों महानुभाव भी मूलतः कवि हैं अतः इनसे शुक्ल जी की कहानियों की अनदेखी हो गई हो तो कोई आश्चर्य नहीं। सन १६४७ ई. का जमाना कविता का था। उस काल में अवधी कहानी लिखने का संकल्प निश्चय ही शुक्ल जी की क्रांतिकारी सोच का परिणाम थी। उनकी ज्यादातर कहानियाँ स्वतंत्र भारत सुमन के रविवारीय परिशिष्ट में छपी भी थीं , जो उस काल खंड में एक बड़ी बात थी। कहना न होगा कि बंशीधर शुक्ल अवधी के वे पुरुस्कर्ता कहानीकार हैं जिनमें एक सातत्य और निरंतरता है। इस दृष्टि से वे अवधी कहानीकारों में शीर्ष पर होने के साथ प्रेरणास्रोत भी हैं। वे आधुनिक अवधी कहानीकारों के जनक भी हैं।

गाँव का तजुर्बा जरिये शुक्ल जी की कहानियाँ

बंशीधर शुक्ल की कहानियों का यदि हम सूक्ष्मता से अध्ययन करें तो यह ज्ञात होता है कि उनकी कहानियों का प्रमुख स्वर गाँव और वहाँ के लोगों के जीवन का सुख-दुःख है। उनकी कहानियों के अधिकांश शीर्षक गाँव से जुड़े हैं , यथा- गाँव की जिन्दगी , गाँव का रहबु , हमार तजुर्वा , देहाती कर्ज आदि। उन्होंने अपनी पहली कहानी 'बेदखल' की बुनियाद आजाद भारत में रखी। सन १६४७ में। किन्तु वह एक कठिन समय था। उस समय तक शुक्ल जी के सम्मुख अवधी कहानी का न तो कोई कहानीकार था और न ही कोई कहानी। हिन्दी साहित्य में अलवत्ता प्रेमचंद , प्रसाद और निराला जैसे कहानीकार कहानी लिख रहे थे। ऐसी परिस्थिति में अवधी में आधुनिक कहानी की संरचना एक बड़ी चुनौती थी। जिसे उन्होंने स्वीकारा।

कहना न होगा कि शुक्ल जी के गाँव नौकरीपेशा , सुशिक्षित लोगों से नहीं बसे हैं बल्कि उनकी कहानियों के गाँव अशिक्षित , मजदूरपेशा स्त्री-पुरुषों से आवाद हैं , जो विभिन्न प्रकार के कृषि कार्यों में संलग्न हैं जो कटनी , बोउनी, नीरउनी करते है, जो लउनी पर फसल काट-पीटकर परिवार के दवा-दरमज और पेट भरने का काम करते हैं। ये प्रायः बटाईदार हैं या छोटी जोत के काश्तकार।

दूसरी तरफ गाँवों में चतुर , चंट , जमाखोर अल्पशिक्षित जमींदार , चौधरी और साहूकार हैं , जिनकी समाज में बड़ी मर्यादा है। अशिक्षा , गरीबी से अभिशप्त लोगो के बीच ही साहूकारों , जमींदारों की दाल गलती है। ऐसे परिवेश में उनके लिए दो के चार का खेल आसान होता है। स्वतन्त्र भारत में आज भी यह एक आश्चर्यकारी तथ्य है कि एक वर्ग कड़ी मेहनत के बाद भी भूखा नंगा सोने को विवश है , क्योंकि वे बिखरे हैं , उनमें एका नहीं है। असंगठित हैं। उनकी कोई सामाजिक मर्यादा नहीं है। उनकी आय का निश्चित स्रोत नहीं है। वे परिवार की आर्थिक जरूरतों (दवा-पानी, शादी-ब्याह, सिंचाई-लगान) से इतना अधिक दबे हैं कि उनमें उस प्रभु वर्ग का विरोध एक स्वप्न है। उन्हें शोषित, अपवंचित वर्ग भी कह सकते हैं। ऐसे पात्र प्रायः तथाकथित निम्न जाति के हैं। शुक्ल जी कहानियों में स्त्री की उपस्थिति नगण्य है। जो हैं वे प्रायः गृहिणी , श्रमजीवी , खेतिहर मजदूर हैं। स्त्री के प्रति शुक्ल जी का दृष्टिकोण सामंती और पुरुष प्रधान है , जो उसे निरंतर दबाये है। इस आशय का एक ही उदाहरण पर्याप्त है "का बताई ! मेहरुआ की जाति , नाकि की बुद्धि। यहि का को समुझावै। बसि अच्छा लेय लगदा औ लगावै दस-बारह करिहांव पर।"

मार-पीट और हिंसा से स्त्री को वश में करने का उपाय पारंपरिक और पुरुष प्रधान समाज का प्रतिदर्श है न कि स्वतंत्र भारत में स्त्री की आजादी के समर्थक वर्ग की।

दूसरी तरफ एक वर्ग ऐसा है जो बिना श्रम के हलुआ पूरी काट रहा है। जिसकी पूंजी बिना किसी मेहनत के ही चक्रवृद्धि ब्याज से भी ज्यादा गति से बढ़ रही है। इस वर्ग में अपने स्वार्थों को लेकर अद्भुत एकता है , जिसे दूसरे शब्दों में शोषक वर्ग कह सकते हैं। इन्हीं दो वर्गो के बीच संघर्ष की अद्भुत दास्तान शुक्ल जी की यह कहानियाँ हैं।

शोषण के विरुद्ध आवाज

शुक्ल जी की कहानियों के गाँव की प्रमुख समस्या शोषित , अपवंचित वर्ग का सरकारी कारिंदों द्वारा अकारण विभिन्न रूपों में प्रताड़ित किया जाना है। जिसमें शुकराना , नजराना , बेगार तथा खेतों सेअसमय बेदखली का भय है। 'बेदखल' कहानी जीवन के इसी यथार्थ की बेबाक अभिव्यक्ति है , जिसका अंत आधुनिक कहानी कला के मुताबिक सांकेतिक है। "हम जिलेदार काहे के जो उसे दो-दो पैसे का मोहताज न बना दिया। अच्छा मुंशी जी , उसका दावा बनवा कर कल ही मुख्तार के पास भेज दो" बेदखली का दावा मुख्तार के पास भेजने का संकेत है। दूसरी तरफ जिलेदार जैसे महत्त्वपूर्ण सरकारी अधिकारी का ओहदे का दुरूपयोग कर उसके तानाशाही रवैय्ये का प्रकटीकरण है। उसका यह शोषणधर्मी रूप है। इतना ही नहीं शुक्ल जी पराधीन और स्वाधीन दोनों भारत में थाना , पुलिस , लेखपाल , कंट्रोल की दूकान , अस्पताल और इनमें कार्यरत विभिन्न सरकारी कर्मचारियों-अधिकारियों के घुसहा चरित्र को भली-भांति जानते थे। वे इसके भोक्ता भी हैं। जो बिना उगाही के न कलम उठाता है और न एक डग आगे ही बढ़ता है . यथास्थितिवाद का पोषण करता है। इस तरह सरकारी तंत्र में पनप रहे भ्रष्टाचार को भी वे पग-पग पर उजागर करते हैं। जो आज की तारीख में सरकारी महकमों में कार्य कराने की शैली की एक पहचान बन गए हैं। उनकी प्रत्येक कहानी में इस सामाजिक यथार्थ का प्रमुखता से अंकन हुआ है। 'गाँव का रहबु' कहानी इन्हीं सच्चाइयों पर केन्द्रित है

" चपरासी सकटू और रामदास दोनों दरोगा जी का दो सौ रुपया दै रक्खीं हैं कि चौधरी का सिर्फ रस्सा लगाय कै थाने पहुंचाय देव मनो फिरि रुपया बरसि जाय पुलिस का लफड़ा बड़ा खराबु होतु है। बिना दिहे-लिहे सांति नाइ होइहैं। इ तरह इसुरीदीन छूटि गे। सब टांय-टांय फिस्स"

यहाँ पर लेखक ने पुलिस के घुसहा रूप का निरूपण किया है।

'गाँव की जिन्दगी' कहानी में अस्पताल के सरकारी कर्मचारियों के भ्रष्ट तथा अमानवीय रूप को कहानीकार ने दर्शाया है

"हमते भंगेवा कहिसि , 'ई एकु नाई सुनिहैं , जब ले इन्हैं कुछु देहौ नाहीं। यहि साईत पांच कंपाउंडर हैं। पांच रुपया देउ तौ अबहें डाक्टर का खबरि होई औ मलहम पट्टी होई। हम सोचेन , यहू सरकारी अस्पताल है , यहिमा दवा मुफ्त मिलति है। का करी राम हियाँ तौ इंटें तक रुपया मंगती हैं। कहाँ से आवै"

उपर्युक्त उदाहरण अस्पताल में भी पनप गए पैसों की माया और कर्मचारियों में सेवाभाव की जगह उनके घुसहे रूप को दर्शाया गया है। यह भ्रष्टाचार की पहली सीढ़ी है। किन्तु शुक्ल जी का यह कहना कि "यहू सरकारी अस्पताल है , यहिमा दवा मुफ्त मिलति है।" का तेवर आलोचनात्मक यथार्थवाद का अद्भुत रूप है। जिन्हें जनता की सेवा के लिए तैयार किया गया था वे ही जनता को लूट रहे हैं। ऐसी जगहों पर शुक्ल जी जनता के दुखों के साथ खड़े हैं। इसे शुक्ल जी का अपनी तरह का रचा गया जनवाद कहा जा सकता है।

मूल स्वभाव से भिन्न मिजाज की कहानियाँ

बंशीधर शुक्ल की कुल कहानियों में तीन कहानियाँ ऐसी हैं जो उनकी मूल प्रकृति से भिन्न हैं। यद्यपि उनका भी मूल आधार गाँव ही है। इनके शीर्षक भी लीक से हटकर निबंध के ज्यादा करीब हैं। 'सरद और हेवंतु' तथा 'पक्षियों की बोली के अर्थ' ऐसे ही शीर्षक हैं। 'सरद और हेवंतु' वर्णनात्मक है किन्तु इसकी शैली निबंधात्मक ज्यादा है। इसमें दोनों ऋतुएँ किस तरह फसल, प्रकृति , मानव और पशु को प्रभावित करती हैं, इसका मनोहारी वर्णन है।

'पक्षियों की बोली का अर्थ' हमें विष्णु शर्मा के पंचतंत्र की याद दिलाती है। इसमें तीन छोटी-छोटी

कहानियों के माध्यम से शुक्ल जी ने यह दर्शाया है कि किस तरह विभिन्न पशु-पक्षियों की बोलियाँ मानव को उसके जीवन में आने वाले तमाम सुख-दुःख , शुभ-अशुभ , शकुन-अपशकुन का पूर्वाभास करा देती हैं। यह हमारे समझ की सीमा है कि हम उन्हें किस तरह समझ पाते हैं। इसी कहानी का एक उदाहरण लेते हैं

" सरगुटिया (एक पक्षी) डार पै किकियानी , हम जानि लिहेन बिरवा पै साँप है। अब इन के अंडन कै खैर नाहीं। बाईं वार कटनास मुँह मूंदे , गाल फुलाए बैठ , हम कहा शकुन नीकि है। साईत ते शकुन नीकि होत है। कदम-कदम पर नई बात बतावा करत हैं। कोई माने ?"

यहाँ कहानी के अंत में लेखक 'कोई माने' जैसा एक सवाल भी खड़ा करता है। शुक्ल जी कहानियों की यह एक शैली है जो कमोबेश हर कहानी में प्रयुक्त हुई है।

'गाँव की जिन्दगी' के अंत में कहते हैं "राति मा रोजु चोरि आवत हैं , रोजु हरनोच्चा घूमति , कंट्रोल की आफति अलगि , बतावो का करी ? यह गाँव कै जिन्दगी है। यहि का सरगु कही की नरकु ?"

उनकी कहानियों की यह प्रश्नाकुलता उनका आलोचनात्मक यथार्थवाद है , जो पाठक को कहानी पर नए सिरे से सोचने को बाध्य करता है। जीवन के दो पहलू हैं। इसे वह पाठक पर छोड़ते हैं कि वह किस पक्ष में जाएगा। वे अपनी तरफ से पाठक पर कोई निर्णय लादते नहीं हैं , बल्कि निर्णय के लिए वे पाठक को आजादी देते हैं। आधुनिक कहानी का यह कठिन मिजाज है , जिसका शुक्ल जी ने काफी हद तक सफल प्रयोग किया है।

'काजी का नौकर' कहानी का शिल्प एक ग्रामीण किस्सागो का है। यह कहानी हास्य और व्यंग्य के सुन्दर सहमेल से रची एक उदाहरण योग्य कहानी है। ऐसी कहानी अवधी में अभी तक तो नहीं है। इसमें दो भाई हैं जो जाति के नाइ हैं। एक भाई घर से नाराज होकर पैसा कमाने परदेस गमन करता है। वह एक काजी के यहाँ नाक काटने की कठिन शर्त पर नौकरी करता है। शर्त हारने पर वह नककटा होकर गाँव में आता है। उसके परिवार की आबरू मिट्टी में मिल जाती है। तब दूसरा भाई उसी काजी के यहाँ उसे सबक सिखाने (बदले की भावना से) के इरादे से उसी शर्त पर नौकरी करता है। इस बार काजी इसकी हरकतों और कारगुजारियों से पनाह मांग लेते हैं। एक रात वे और उनकी पत्नी संदूक में सारा सामान ले भाग जाते हैं। नौकर खुद को संदूक में बंद कर लेता है। जब वे उसे खोलते हैं तो काजी की पत्नी कुएँ में भय से गिरकर मर जाती है। काजी नौकर से नाक कटवाकर अपने गाँव जाते हैं। बस कहानी इतनी-सी है , किन्तु इसके निहितार्थ बड़े हैं। क्या नाक काटने का मतलब नाक काटना है ? नहीं। किसी का मर्यादाविहीन होना ही नाक काटना है। बड़े ने पहले छोटी जाति की मर्यादा पर चोट की तो छोटी जाति के नाई ने काजी जैसे कुलीन वर्ग के व्यक्ति की मर्यादा को तार-तार कर दिया। यह कहानी समाज में दलित जाति के बढ़ रहे उभार को भी बयान करती है। इस कहानी का निहितार्थ यह भी है कि काजी जैसे जमींदार कुलीन वर्ग का यह शगल है कि वे छोटे लोगों के जीवन से मनोरंजन करते हैं। यह कहानी उसका प्रतिपक्ष रचती है । कहानी का यह नया पाठ है और कहानी यह नया सन्देश अपने पाठकों तक बखूबी संप्रेषित करती है।

आधुनिक अवधी के प्रेमचंद : खड़ी बोली के लिए चुनौती

बंशीधर शुक्ल अवधी ही नहीं खड़ी बोली के कहानीकारों के लिए भी एक चुनौती हैं। क्योंकि उन्होंने मुस्लिम समुदाय की ज्यादतियों को साहसिक अभिव्यक्ति दी है। इस कड़वे सच को आज का बड़े से बड़ा कहानीकार जान कर भी नहीं कह पा रहा है। आज मुस्लिम जिन गाँवों में बहुसंख्यक हैं वहां हिन्दुओं के साथ सौतेला व्यवहार करते हैं। उनकी आवाज और स्वतंत्रता को दाब रखा है। उन्हें अल्पसंख्यक की तरह रहने को मजबूर किया है। 'गाँव की जिन्दगी' इन्हीं विचारानुभवों का बयान करती कहानी है। इसका नायक घोसियों की ज्यादती का शिकार है। फिर भी उनके भय के कारण उनके खिलाफ थाने में बयान देने को नहीं तैयार है

"रमदइला के घर के सही बात कहै का नाईं तैयार हैं। हमैं घोसी खाय जैहैं। हम अकेल आदमी। चौधरी तनिकुइ अकड़े तौ उनकी भैंसी राती-रात रपटाइ कै चार कोस पै बंद कै दिहिन। भाई हम लड़ाई नाई लेब"

इस उदाहरण से जहाँ घोसियों की दबंगई का खुलासा होता है वहीं पर अकेले आदमी के बड़े समूह से लड़ने के प्रति एक भय भी दर्ज होता है।यहाँ शुक्ल जी कहानीकार की कल्पना की जगह यथातथ्यवाद का पोषण करते हैं। जिसकी लाठी उसकी भैस के पक्ष में दिखते हैं। कहानीकार मानवीय जिजीविषा के चित्रण के साथ भविष्य के समाज का रचनाकार होता है। शुक्ल जी की कहानियों में मुस्लिम चरित्रों के विभिन्न रूप हैं। जिसमें काजी अगर जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है तो घोसी , रहमान छोटे वर्ग के हैं , जो दबंग और बदमाश के रूप में चित्रित हैं।

शुक्ल जी श्रम की रोटी में विश्वास व्यक्त करते हैं। वे गाँव के बरक्स शहरी लोगों का मूल्य कमतर आंकते हैं। वे रोजगारपरक शिक्षा और खेती के पक्षकार हैं। उनकी कहानियों में खेती-किसानी और गाँव का यथार्थ बेहद जमीनी है। वे खेती-किसानी की प्राकृतिक आपदा सूखा-बाढ़ तथा मानवीय आपदा हरनोच्चा , पशुचोट्टा और गाँव की चोरी-डकैती का सच भी जानते हैं। इन स्थितियों में उनके ग्रामीण पात्र कहीं जंग बहादुर हैं तो कहीं समाज भीरु वहीं कहीं पर जातीय एका के बल पर बड़ों के विरुद्ध संघर्षशील भी हैं। साहूकारों को धूल चटाते हैं। ऐसी जगहों में न जनता का शोषण के विरुद्ध प्रतिरोध देखते ही बनता है। जो छोटी जातियों का अपने अधिकार के प्रतिकार के प्रति , मान-सम्मान के प्रति जागरूकता का लक्षण है। जो डा. अम्बेडकर की वैचारिक क्रान्ति का प्रतिफल है , जिसे शुक्ल जी ने देखा भी था। इन तमाम दृष्टियों से 'बेदखली' , 'गाँव का रहबु' , 'हमार तजुर्बा' और 'देहाती कर्ज' अपने प्रखर युगबोध के कारण उल्लेखनीय होने के साथ प्रेमचंद्र की कहानियों के समकक्ष ठहरती हैं। इसके मद्दे नजर 'देहाती कर्ज' कहानी का विवेचन जरुरी है।

देहाती कर्ज' कहानी गाँव के मह्तौ दुर्जन साहूकार के कर्ज तले दबे , शोषण की चक्की में पिसते सकटू , उसकी पत्नी सुखलो , बेटा दूबरि के संघर्ष और प्रतिरोध व अदम्य जिजीविषा की गाथा है। कहानी सिर्फ इतनी है कि सकटू दुर्जन मह्तौ से अपने बेटे की शादी के बाबत एक सौ रुपये का कर्ज लेते हैं। वे सवा सौ रुपये का रुक्का लिखवा लेते हैं। कर्ज अदा करने के बाद भी अदालत की नजर में किसी प्रमाण के अभाव में सकटू का परिवार कर्जदार सिद्ध होता है ? सकटू का पूरा परिवार साहूकार के शोषण से तंग आकर गाँव से भागकर बेटे की ससुराल में पनाह लेता है। वहां भी दुर्जन का बेटा अदालत का आदेश लेकर कुड़की और वसूली के लिए निरंतर जाता रहता है। सकटू एक दिन सत्यनारायण की कथा सुनते हैं। उनके दरवाजे पर मेहमानों की भीड़ है। दुर्जन का बेटा घोड़े पर चढ़कर कुर्की करने आता है। इस सामाजिक अपमान की रिश्तेदारों में तीखी प्रतिक्रिया होती है "एक कहिसि दूबरि का तुम कोई नाक कटाये हौ। सब रुपया भुगति चुके हौ , तबहूँ यह कसाई जस अड़ा है। मारौ यहिका , का चौबाहूँ है। दूबरि उठाइन फरिका कै बाँस औ दोंय दै खोपड़ी पर धमकि दिहिन। दूसर पुरान हरु हनिसि। तीसर घोड़िया पइसे टांग खींचि लिहिस। "भैया सब जन छोड़ि देव हम तुम्हार गाय।" साहूकार के लरिकऊ भगे देंह सोहरावत। हाय ! हमरे जियति मा हमरे लरिका का चमारु मारिस। रुपया-पइसा कहिके। यह तो यही बियोग मा बेराम भये औ मरिगे। मह्तौ के लरिका अलगि भये। काम सटपटान। ऐसी सकटू के दिन बहुरे।"

उपर्युक्त उदाहरण क्या मातादीन पंडित और सिलिया की याद नहीं दिलाता ? जहाँ पर सारे दलित समूह की ताकत पाकर मातादीन के ब्राम्हणवाद को तार-तार कर देते हैं। सब उनके विरुद्ध पूरी ताकत से खड़े हो जाते हैं , दो लोग मातादीन का हाथ पकड़ते हैं। सिलिया का पिता उनके ब्राम्हणत्व के प्रतीक जनेऊ को तोड़ता है। एक आदमी जबरिया उनके मुँह में हड्डी का टुकड़ा डालता है।

ठीक इसी तरह सकटू के रिश्तेदार जो जाति के चमार हैं , समूह की ताकत पाकर दुर्जन मह्तौ के बेटे की दुर्गति करते हैं। एक पुराने बाँस से , एक हल से और तीसरा उसे घोड़ी से खींचकर नीचे पटकता है। इन दोनों प्रसंगों पर अम्बेडकर चेतना का स्पष्ट प्रभाव है। प्रेमचंद्र के तेवर जहाँ ब्राम्हणवाद के विरुद्ध बागी हैं वहीं शुक्ल जी समाज के शोषक दुर्जन मह्तौ के विरुद्ध हैं। यहाँ पर

प्रेमचंद्र का जनवाद जहाँ एक निश्चित विचारधारा के दक्ष लेखक-सा है वहीं पर शुक्ल जी का जनवाद , शोषण के विरुद्ध आवाज , छोटी जातियों का अपनी अस्मिता के प्रति जागरूकता आदि , एक किसान के दरवाजे पर घट रही घटना का देशज ढंग का जनवाद है। उनकी लड़ाई का ढंग , उपकरण और शैली देशज है। मगर प्रेमचंद्र में वह नहीं है। प्रेमचंद्र जहाँ मातादीन को ब्राम्हणत्व त्यागकर चमार के रूप में दर्शाते हैं , वहीं शुक्ल जी चमारों के द्वारा सामाजिक रूप से अपमानित होने पर दुर्जन को मौत के घाट पहुँचाते हैं। सकटू के प्रयास से समाज निर्भय होता है। साहूकारी के शोषण से मुक्त होता है। उनका बेटा अलगौझा करता है। उनके पतन के दिन प्रारम्भ होते हैं , वहीं सकटू के परिवार के उत्थान के दिन शुरू होते हैं। इस कहानी का निहितार्थ समाज में बदलते हुए सोच की परिवर्तनकामी हवा को दर्शाता है। सच तो यह है कि शुक्ल जी की यह कहानी दलित विमर्श और दलित चेतना की खड़ी बोली की किसी भी कहानी से कम नहीं है। इसे दलित चेतना की प्रतिनिधि कहानी कहा जा सकता है।

बंशीधर शुक्ल की कहानियाँ अपने समय की युग चेतना की प्रतिनिधि कहानियाँ हैं। वे अगर आज भी प्रासंगिक हैं तो इसलिए कि उनके गाँव आज भी कमोवेश वैसे ही हैं। 'ऐसे सकटू के दिन बहुरे' जैसे कथन उनकी लोक चेतना की सम्पृक्ति के सूचक हैं। जो हमारी लोक-कथाओं, लोक-कहानियों की टेक-सी हैं। वे मनसा-वाचा-कर्मणा कवि ज्यादा थे इसलिए उनकी वर्णनात्मकता में काव्यात्मकता का भी आस्वाद है। मुहावरों और लोकोक्तियों का संतुलित प्रयोग अगर कहानियों में चारुता की वृद्धि करता है तो अतिशय मोह उसकी पठनीयता को घटाता है। एकाध कहानियाँ ऐसी हैं। शुक्ल जी की कहानियाँ इकहरे जीवन यथार्थ की न होकर संश्लिष्ट जीवन-यथार्थ की निश्छल अभिव्यक्ति हैं। उनकी कहानियाँ आधुनिक अवधी कहानियों की बहुमूल्य थाती हैं। मगर यह कहना ज्यादा सच होगा कि बंशीधर शुक्ल आधुनिक अवधी कहानियों के प्रेमचंद्र हैं।

.... पृष्ठ 26 का शेष

अवधी बोली के माध्यम से ग्रामीण जनता तक उनका जुड़ाव गहरे तक था। चाहें वह आकाशवाणी के प्रसारण के माध्यम से चाहें कवि रूप में कवि सम्मेलनों के माध्यम से।

शुक्ल जी धैर्यपूर्वक सबके दुःख-दर्द में शामिल होते थे। अपने न होने का दुःख अपनी इस अवधी कविता में उन्होंने व्यक्त किया हैं।

हमका दुःख हइ, तउ यतनै हइ
नन्ही चिरइन पर का बीती?
जो घरू घुरूघुचु हमका सौंपिनि,
उनके अंडन पर का बीती?
जब उइ जेहैं चुंगा ढूढै,
को उनका पहरेदारू बनी?
जब खुले निबाये याँ हवै हैं,
तउ दुनिया तीर-कमान तनी,
हम यहे बात माँ दुबरे हन,
मुल दुबरियन का दुरियाई का?
हम हरी डाल के पत्ता हन,
पतझारन ते घबराई का।

सचमुच वे पतझारन से कभी नहीं घबरायें। सुंदर कवित्त और सुन्दर कंठ उन्हें अपने अल्हैत पिता से विरासत में भी मिला, जिसे अपनी प्रतिभा के बूते उन्होंने भरपूर लोगों तक पहुँचाया। 'मेला घुमनी', 'आल्हा सुमिरनी', 'बेटी बेचन', 'राष्ट्रीय गान', 'चुगल चण्डालिका' जैसी कई छोटी-छोटी पुस्तकें थीं। जिन्हें प्रायः मेलों में भीड़ को सुना-सुना कर वे लोगों का भरपूर मनोरंजन करते थे। सन 1925 ई. के आसपास वे कविताओं के क्षेत्र में बड़ा लोकप्रिय और जाना माना नाम हो चुके थे।

उनकी प्रतिभा, उनका मधुर कंठ उन्हें ऑल इंडिया रेडियो की दहलीज तक ले आया। यद्यपि वंशीधर शुक्ल जैसी प्रतिभायें संभवतः बंधनों के लिए बनी ही नहीं होती, वे सरकारी नौकरी छोड़कर चले गये उन्मुक्त गगन की उड़ान भरने को।

"वंशीधर शुक्ल यादों के आइने में"

डॉ0 अनामिका श्रीवास्तव *

सन् 1938 में आकाशवाणी लखनऊ अस्तित्व में आया और उस दौर में ये ऑल इंडिया रेडियो के रूप में जाना जाता था। आजादी से पहले के उस दौर में रेडियो एक ओर मनोरंजन के लिए शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत और सुगम संगीत के लिए जाना जाता था, वहीं रेडियो का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य ग्रामीण जन को ज्ञान-विज्ञान और जानकारियों से युक्त करने का था और उत्तर भारत के उन पहले केन्द्रों से जहाँ ग्रामीण कार्यक्रमों के प्रसारण की शुरूआत हुई, लखनऊ उनमें से एक केन्द्र था। ग्रामीण कार्यक्रम का प्रारम्भ बलभद्र दीक्षित 'पढ़ीस' जी द्वारा किया गया और ऑल इंडिया रेडियो के उस शुरूआती दौर में ही वंशीधर शुक्ल रेडियो की सेवा में आये। ऐसा कहा जाता है कि पं0 गोविन्द बल्लभ पंत के आदेश से शुक्ल जी ने आकाशवाणी में काम करना शुरू किया था, और उस शुरूआती दौर में उन्होंने लगभग दो वर्ष तक आकाशवाणी के ग्रामीण कार्यक्रमों में अपनी प्रस्तुतियाँ दीं।

वंशीधर शुक्ल लखीमपुर जिले में पिता के साथ प्रायः चौपाल पर जाया करते थे। वे पिता के आल्हा गायन से भी काफी प्रभावित थे। सम्भवतः गीत, संगीत के इस माहौल और स्वंय उनकी रचनाधर्मिता ने उन्हें आकाशवाणी से जोड़े रखा होगा। यद्यपि कवि रूप में तो अपनी रचनाओं से वे काफी प्रसिद्ध हो चुके थे।

1939 में द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने के वाद शारतीय सेना को युद्ध मे झोंकने का भारतीयों ने विरोध किया। महात्मा गांधी के कहने पर सभी कांग्रेस सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया। वंशीधर जी को यह वहुत अच्छा लगा। यूँ भी सरकारी नौकरी शुक्ल जी जैसे आजाद पंछी को बहुत नहीं भा रही थी। वे आकाशवाणी की नौकरी छोड़ कर घर आ गये। 1940 में महात्मा गांधी के सत्याग्रह आंदोलन छेड़ने पर 'बज गया विगुल बज गया, बज गयी वीर रणभेदी' गीत लिखा। वंशीधर शुक्ल भी गिरफ्तार हो गये।

बंशीधर जी के सम्बन्ध में थोड़ी बहुत जानकारी चंद्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' के पुत्र डॉ0 अरूण त्रिवेदी से प्राप्त हुई। एक संदर्भ में उन्होंने बताया कि वंशीधर जी अपने दौर में ज्यादातर अवधी में ही लिखते थे और प्रायः कांग्रेस से उनकी असहमति होती थी। और इस विरोध को मंचीय कविताओं में वे स्पष्ट रूप से व्यक्त भी करते थे।

विजयलक्ष्मी पंडित उ0प्र0 की गवर्नर थीं। गवर्नर हाउस में डॉ0 सम्पूर्णानंद उनसे मिलने गये। इस पर वंशीधर शुक्ल ने विरोध कविता में कुछ इस तरह जताया--

'विजयलक्ष्मी भवन में है सम्पूर्णानंद,
सीता को फुसला रहा लंकेश्वर दसकंद।'

इसी तरह का एक और संस्मरण है आकाशवाणी में एक कवि सम्मेलन के दौरान वंशीधर शुक्ल जी कविता पाठ कर रहे थे। रेडियो की अपनी सीमायें हैं परन्तु विद्रोही व्यक्तित्व के शुक्ल जी प्रायः अपनी ही धुन में होते थे। ऐसे ही उनकी किसी कविता का एक अश था।

'तुम पूरे मूरखनंद बनो,
पूरा सम्पूर्णानंद बनो'

डॉ0 सम्पूर्णानंद कांग्रेस के प्रतिष्ठित नेताओं में से थे। शुक्ल जी ने कवि सम्मेलन में इसे पढ़ तो दिया परन्तु प्रोड्यूसर की मुसीबत यह रही होगी कि इसे प्रसारित नहीं किया जा सका था। तो उनसे कहा गया कि इसे कैसे ठीक किया जाये तो उन्होंने अपने तरीके से जो संशोधन किया वह भी कम मजेदार नही है। वे बोले इसे सम्पूर्ण आनंद कर दो। तो ऐसे थे वंशीधर शुक्ल ।

सन् 1957 में वंशीधर शुक्ल जी समाजवादी दल के प्रत्याशी के रूप में भारी बहुमत से जीते। कहते है कि मात्र एक माह में अपनी साइकिल से घूम-घूम कर प्रचार करते रहे। किन्तु उनकी दयाद्रता, रचनाशीलता और लोगों से जुड़ाव ने 'जन प्रिय नेता और कवि' की श्रेणी में ला खड़ा किया था। उन्होंने कांग्रेस के उस दौर में कांग्रेस का घोर विरोध किया। 1957 के चुनावों में लखीमपुर जिले की कोई सीट कांग्रेस के पास नही थी यहाँ तक कि संसद सीटें भी समाजवादी लोगों के पास रहीं।

शेष पृ. 25 पर

*अधिशासी अधिकारी आकाशवाणी, लखनऊ

बंशीधर शुक्ल के खड़ी बोली काव्य में हास्य-व्यंग्य

डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स' *

"बंशीधर शुक्ल की काव्यधारा में हास्य-व्यंग्य का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज हिन्दी में हास्य-व्यंग्य लिखने वाले दर्जनों कवि दृष्टिगोचर होते हैं , परन्तु यह वह समय था जब पराधीन भारत में अंग्रेजी शासन तथा राजा-महाराजाओं पर व्यंग्य कसने के लिए बड़े साहस की आवश्यकता थी। बंशीधर शुक्ल जैसा कवि यह कार्य कर सकता था, जिसे जेल से प्रेम हो" (जनकवि बंशीधर शुक्ल, पृष्ठ 48-49)। तब नेता (जनप्रतिनिधि) भी सम्मान के पात्र थे , आज की तरह व्यंग्य और कटाक्ष के नहीं। सुप्रसिध्द व्यंग्यकार शायर अकबर इलाहाबादी ने तब नेताओं के लिए सिर्फ इतना कहा था -

लीडर को मुल्क का गम बहुत है,
मगर आराम के साथ।

सन 1940 ई. के आस-पास बलभद्र दीक्षित 'पढ़ीस' , बंशीधर शुक्ल , चंद्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' , इत्यादि अवधी कवियों के अतिरिक्त बेधड़क बनारसी , चोंच तथा गोपाल प्रसाद आदि हास्य रस के कवि थे जो कवि सम्मलेन के मंचों पर दिखलाई पड़ते थे।

विशुद्ध हास्य और व्यंग्य में तात्विक अंतर है। हास्य हमें हंसाता है , गुदगुदाता है और तरंग से भर देता है . व्यंग्य चोट करता है , कचोटता है और सचेत करता है। खालिस व्यंग्य गाली-गलौज का द्योतक कहा जाएगा , परन्तु जब वह हास्य का आवरण ओढ़ कर आता है , तब हास्य का अंग बनता है। शुक्ल जी के व्यंग्य हास्य की निधि हैं। हास्य मनोरंजनार्थ होता है , जबकि व्यंग्य सोद्देश्य होता है। शुक्ल जी व्यंग्य को हास्य की चासनी में लपेट कर परोसने की कला में सिद्धहस्त हैं। शुक्ल जी अपनी विचित्र एवं नवीन भावाभिव्यन्जना के माध्यम से हास्य तो उत्पन्न करते ही हैं , साथ ही व्यवस्था व परिस्थिति पर एक करारी चोंट करने से भी नहीं चूकते। समाज के अराजक तत्वों , बदमाशों को जब वे अवतार की संज्ञा से सुशोभित करते हैं तो स्वाभाविक हास्य उत्पन्न होता है

कलि के कलंक अवतार तुम्हीं ,
बदमाश तुम्हारी जय होवे।
भलमंसों के खूंखार तुम्हीं ,
बदमाश तुम्हारी जय होवे।

****

लुच्चा, गुंडा, लोफर, तस्कर, डाकू , उस्ताद , गुरू भैय्या,
इतनी उपाधियों से भूषित मस्ती से चला रहे नैय्या।
गाँवों की हो सरकार तुम्हीं,
बदमाश तुम्हारी जय होवे।

****

वर्षों प्रचार से लेक्चर से जो काम न लीडर कर पाते,
वे काम तुम्हारी वाणी की गर्जन से क्षण में हो जाते।
शकुनी के वंश लिलार तुम्हीं ,
बदमाश तुम्हारी जय होवे।

विकृति व विसंगति हास्य की आधार शिला है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से भारतीय धर्म व संस्कृति के क्षरण को शुक्ल जी इस अंदाज से चित्रित करते हैं कि सहज हास्य उत्पन्न हो जाता है

ऊबे हिन्दू धर्म से, प्रथा से, पूजा-पाठ से हैं,
बंद मंदिरों में पड़े झूठे व्रत नेमा में।
मानते नहीं हैं, अपनी ही हठ ठानते हैं,
अंडा बिस्कुट केक आने दें न खेमा में।
राधा, सीता, गोपिका औ लक्ष्मी हैं बूढ़ी हुई,
रस न रहा है अंश भारतीय प्रेमा में।
ढूंढों न गुलामों ! माला तिलक रमा के कहीं,
आजकल विष्णु वास करते सिनेमा में।

शुक्ल जी विचित्र उपमान सर्वत्र हास्य का कारण बनते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय फासिस्टों की पकड़ मजबूत होते देख ब्रिटेन ने अपनी सेना भारी संख्या में स्त्रियों को भी भरती करना शुरू कर दिया। ब्रिटेन की महिलाओं द्वारा युद्ध लड़ने का वर्णन करते हुए शुक्ल जी

---

*जवाहर नवोदय विद्यालय, ग्राम व पोस्ट-घुघुलपुर, जनपद-बलरामपुर-271201 उत्तर प्रदेश

की उपमाएं हास्य को कविता का स्वाभाविक अंग बना देती हैं -

आनन है बम-सा, कपोल जहरीली गैस,
चुम्बन चितौनि है सुरंग बाँके नैन की।
टैंक-सा शरीर कहैं लारी कहैं लारा कहाँ ,
हाथ में मशीन चाल है हवाई ट्रेन की।
दुग्ध में दुधारी है पियारी कई प्रेमियों की ,
कटि केहरी-सी खाँव-खाँव करै सैन की।
आज हिटलर पर गोल-गोल बम लेके ,
गोल-गोल चढ़ें लागीं गोरियाँ ब्रिटेन की।

शुक्ल जी का हास्य कभी-कभी इतना मारक हो जाता है कि अश्लीलता की सीमा को छूने लगता है। परतंत्र देश का एक क्रांतिकारी कवि जब अत्याचारी शासक के बारे में लिखेगा , तो भाषा में तीखापन व कड़ुवाहट आ ही जायेगी। फिर भले ही वह हास्य रस में ही क्यों न लिख रहा हो। अंग्रेजी हुकूमत का उपहास उड़ाना भी आक्रोश की अभिव्यक्ति का एक माध्यम था। भाषा का यह तीखापन शुक्ल जी के इस छंद में दृष्टव्य है

पुरुष रहे न , रहने की नहीं आशा और ,
पाला पड़ा जर्मनी महान शक्तिशाली से।
लड़ रहे बंदी हुए और होना चाहते हैं ,
अंडा गर्भ रंडा में जमेगा किस माली से।
कहा लौंडियों से नारोत्पादक मशीनों चलो ,
पेट में भरे कुपूत डायर कुचाली से।
आज रति विपरीत का छिड़ा अनोखा युद्ध ,
फल एकनाली काम लीजिये दुनाली से।

सन 1942 ई. के आरम्भ में युद्ध की स्थिति ने अंग्रेजों को भारतीय नेताओं से बातचीत के लिए मजबूर कर दिया। भारतीयों को द्वितीय विश्वयुद्ध में खींचे जाने का प्रबल विरोध हो रहा था। उधर जापानी सेना ने दक्षिण-पूर्व एशिया के कई देशों में ब्रिटिश सेना को भारी क्षति पहुंचाई थी। ब्रिटिश सरकार ने स्थिति की गंभीरता से निपटने के लिए अपने एक मंत्री सर स्टाफोर्ड क्रिप्स को भारत भेजा। सर क्रिप्स की भारतीय नेताओं से बातचीत असफल रही। ब्रिटिश भारत में एक वास्तविक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हुए। सर क्रिप्स को बिना किसी निष्कर्ष के वापस जाना पड़ा और कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज की माँग करते हुए 'भारत छोड़ो आन्दोलन' छेड़ दिया। शुक्ल जी क्रिप्स मिशन की असफलता को सिद्ध करने के लिए जन सामान्य में प्रचलित अंधविश्वासों का प्रयोग इस ढंग से करते हैं कि खुद-ब-खुद हास्य उत्पन्न हो जाता है। किसी कार्य को करते समय छींकना या किसी काने व्यक्ति को देखना अशुभ माना जाता है। इस लोक मान्यता का प्रयोग हास्य की सृष्टि करने के लिए देखें

सोच के चले थे क्या कि रूस सा अनाड़ी देश,
इसी हेतु कांग्रेस के गढ़ में पीले थे क्या ?
बात-बात ही में करें वादा कुछ देंगे कुछ ,
किन्तु विश्वयुद्ध में भविष्य के तले थे क्या ?
सारा श्रम व्यर्थ हुआ नीति का दिवाला किया ,
मार्ग में प्रथम जिन्ना काने से मिले थे क्या ?
जैसे आये वैसे गए मुख अपना सा लिए ,
बेटा क्रिप्स लन्दन से छींकते चले थे क्या ?

सन 1935 ई. के बाद से ही शुक्ल जी अपने नेताओं से असंतुष्ट दिखने लगे थे। सन 1946 ई. में ब्रिटिश सरकार ने भारत में अपना शासन समाप्त करने की घोषणा की। कैबिनेट मिशन भारत आया जिसने सत्ता हस्तांतरण के बारे में भारतीय नेताओं से बातचीत करके अंतरिम सरकार बनाने और संविधान सभा बनाने का प्रस्ताव रखा। संविधान सभा ने दिसंबर 1946 ई. में अपना कार्य शुरू कर दिया। मगर मुस्लिम लीग ने उसमें भाग लेने से इनकार कर दिया। मुस्लिम लीग ने पृथक पाकिस्तान की माँग पर जोर दिया। लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना सत्ता लोभ में फँसकर पाकिस्तान की माँग पर अड़ गए। देश भर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे भड़क उठे। इस स्थिति ने शुक्ल जी को बहुत आहत किया। यह बात तो बिलकुल साफ थी कि पाश्चात्य रंग-ढंग में डूबे जिन्ना धार्मिक आस्था के बजाय मात्र सत्ता सुख के लिए पाकिस्तान की माँग कर रहे थे। शुक्ल जी ने धर्मान्ध जिन्ना के दोहरे चरित्र को बेनकाब करने में कोई कसर

नहीं छोड़ी। 'बनाओ मियाँ न पाकिस्तान' कविता में जिन्ना पर किये गए व्यंग्य का पैनापन देखा जा सकता है

बनाओ मियाँ न पाकिस्तान ,
देशहो जाएगा वीरान।
बढ़े कुछ गिरगिट जैंटिलमैन, भेष इंग्लिश मुस्लिम के वैन,
बात करने की नहीं तमीज किसी विधि चाहें अपनी चौन।
बात के मुस्लिम दिल क्रिस्तान,
बनाओ मियाँ न पाकिस्तान।
न सीखी कुरां न मुस्लिम धर्म, मुहम्मद का न जानते मर्म,
स्वप्न मं देखें दैरो-हरम न दाढ़ी मोंछ न हया न शर्म।
नहीं कुछ जाति धर्म का ध्यान ,
बनाओ मियाँ न पाकिस्तान।

सन 1947 ई. में देश स्वतंत्र हो गया। लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही देश में आम चुनावों की शुरूआत हुई। देश का नागरिक 'वोटर' में तब्दील हो गया। चुनाव जीतकर शासन-सत्ता गें पहुँचने वाले नेता आम जनता को भूल गए। अगले चुनावों के समय ही उन्हें जनता की याद आई। वोट लेने के लिए जनता को भगवान तो बना दिया गया , किन्तु चुनाव के बाद उनकी बदहाली को देखने वाला भी कोई न रहा। चुनावी राजनीति की इस विसंगति पर शुक्ल जी ने गहरी चोट की है

गड्डों नोट तिजोरी खाता,
तन-मन-धन सर्वस्व समर्पण।
जब तक वोट नहीं देते हो,
तब तक ब्रह्म समान,
जय वोटर भगवान।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय पुलिस पहले की अपेक्षा और निरंकुश हो गई। पुलिस व राजनीति के गठजोड़ ने अपराधियों को प्रश्रय देना शुरू कर दिया तो स्थिति कुछ ज्यादा अराजक होती चली गई। भारतीय पुलिस पर शुक्ल जी का व्यंग्य कितना सटीक है , देखें

असहयोग के दिनों देश में नंगी नाची ,
हाय ! आज वह पुलिस बनी शासन की चाची।
चोरी डाका कतल कराती , लूट मचाती ,
अपराधी को छोड़ जेल निर्दोष पठाती।

सन 1962 ई. में भारत-चीन युद्ध हुआ तो नेहरू के 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारे की पोल खुल गई और विश्वबंधुत्व की नीति भरभरा कर ढह गई। शुक्ल जी को पहले ही इसका आभास हो चुका था। प. नेहरू के विश्वबन्धुता पर उन्होंने एक चुटीला व्यंग्य लिखा

यदि अपने दस लड़के होते,
विश्वबन्धुता सार्थक होती ,
हम भी बड़े आदमी होते।

****

एक ब्याहते अमरीका में,
एक चीन में, एक रूस में,
एक ब्रिटिश में, एक फ्रांस में,
एक जापान, एक जर्मन में,
एक टर्की में, एक इरान में ,
एक दक्षिण अफ्रीका में ।

शुक्ल जी साहित्यिक विसंगतियों से भी पूरी तरह वाकिफ थे। कवि-सम्मलेन के मंचों पर हास्य के नाम पर फूहड़ता तथा सम्पादक से जोड़-तोड़ करके पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित करवाना उन्हें कतई पसंद नहीं था। साहित्यकारों का पतन देखकर वे क्षुब्ध थे। अपने एक मित्र 'भुसुण्डि जी' के प्रति लिखी गई एक कविता में वे साहित्यिक क्षेत्र में आई विसंगति पर कटाक्ष करते हैं

साथी अब मत छन्द रटाओ।
पत्रकार-पत्रों को रिश्वत देकर नाम कमाओ।
कविता के भण्डार बनो अखबारों को अपनाओ,
तन-मन-धन दे सम्पादक को कवि मण्डल में जाओ।
फीस बढ़ाओ, नारि फँसाओ, मदिरा-माँस उड़ाओ,
सिनिमाशाही गाना गाकर कवि स्वच्छन्द कहाओ।

अन्ततः कहा जा सकता है कि हास्य और व्यंग्य शुक्ल जी की काव्यधारा की एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। हास्य-व्यंग्य लिखने के कारण ही शुक्ल जी मंच के कुशल एवं प्रख्यात कवि बन गए और सारे देश के कवि-सम्मेलनों में निरंतर बुलाये जाते रहे। उनका असीम समादर हुआ। आजादी के बाद सत्ता के प्रति व्यंग्य और कटाक्ष खूब लिखे जाने लगे , जो जनतंत्र में सहज है , शुक्ल जी अंत तक (सन 1980 ई.) इन सब में भी आगे रहे।

पं0 वंशीधर शुक्ल के काव्य में ग्राम्य वर्णन

सीमा पाण्डेय*

आधुनिक अवधी के कालजयी प्रतिष्ठित कवि पं0 वंशीधर शुक्ल ग्राम्य-जीवन के अनुपम चित्रकार हैं। ग्राम्य-जीवन उनकी कविता का मूल बिन्दु ही नहीं, अपितु उनके जीवन का पर्याय है। वह मूलतः ग्रामीण व्यवस्था के रचनाकार हैं। उनकी कविताओं की सबसे बड़ी विशेशता उनका ग्राम्य प्रकृति-चित्रण, ग्राम्य-जीवन तथा ग्रामीण-संस्कृति का चित्रण है जिनसे हिन्दी का काव्य अब तक वंचित रहा है। अतः यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि ग्राम्य-जीवन तथा ग्राम्य प्रकृति-चित्रण के क्षेत्र में अवधी के इस कवि ने हिन्दी काव्य को जो कुछ दिया है वह अब तक पूरे हिन्दी काव्य में न था। पं0 वंशीधर शुक्ल की गहरी लोकानुभूति ने उन्हें जनता का कंठहार बना दिया। लोक जीवन की दर्द भरी जो गहराई उनके काव्य में देखने को मिलती है वह अन्यत्र नहीं। जाड़े के दिनों में उत्तर-भारत के गरीबों की क्या दशा होती है इसका चित्रण उन्होंने निम्न पंक्तियों में किया है-

''अम्मा रोटी, अम्मा रोटी
जाड़ेन का महिना, चलइ हवा, सपने माँ नींद नहीं आवइ।
छा दिन ते दइउ नहीं निकरा, ना लगी मजूरी कोहू की,
आगी अधबुझ, पैरा अधभिज, आँतै खौख्याइँ पतोहू की।
मारे मसट्ट परि रहा बापु, अम्मा कहि रही कथा छोटी,
अधराति कहाँ रोटी पानी, लरिका माँगइ 'अम्मा रोटी'।''

यह लोकानुभूति आज के उन महाकवियों के पास कहाँ से आयेगी जिनकी ग्रीश्म की दुपहरी या तो हिमगिरि के अंचलों में व्यतीत होती है या 'कूलर' एवं खश-खश की टट्टियों के मध्य, जिन्होंने ग्रीष्म की प्रचण्डता सुनी भर है, देखी नहीं, जो ग्रीष्म की प्रचण्डता में न तो स्वयं कभी हाँफे हैं और न भैंसों को कभी हाँफते हुए और कीचड़ में लेटते हुए ही देखा है। सच्चा लोककवि ही सही अर्थों में महाकवि हो सकता है। जिस कवि की लोकानुभूति जितनी गहरी होगी, उतना ही वह बड़ा महाकवि होगा। लोकानुभूति की गहराइयों ने ही कालिदास, कबीर, जायसी, सूर और तुलसी को महाकवि बनाया है और सदा सदा के लिए जनता के आँगन में खड़ा कर दिया है। पं0 वंशीधर शुक्ल ग्रामीण व्यवस्था और किसान संस्कृति के कवि हैं। उन्होंने पराधीन भारत में अवध क्षेत्र की गरीबी भली-भाँति देखी भी है और भोगी भी है। 'अम्मा रोटी' शीर्षक कविता में कवि ने भारत की भूखी संतति का बहुत ही मार्मिक, अलभ्य, यथार्थ और अपूर्व चित्रण किया है। भूखा बच्चा जब माँ से रोटी माँगता है, तो वह रोटी की जगह पाता है भय, आश्वासन और अंत में प्यारा सम्बोधन। आखिर गरीब माँ के पास और है ही क्या ?हृदय को छू लेने वाली इस कविता की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य है-

''भइया चुप रहउ राति होइगइ, मोहरे पर बइठ कटनुवाँ हैं,
छगरी का कानु काटि लइगा, ऊ बड़ा कुतौना खनुवा है।
जे कहुँ अबकी तनिकउ रोइहउ, तउ कानु कटाई कनकटुवा,
करधनी काटि लेई मुसवा, तेहिते चुप्पे स्वावउ पुतवा।
मुलु कइउ दिनन का भूँखा लरिका, आँतन माँ परि रही जरनि,
तब कइसे सोइ सकइ चुप्पे, फिरि सुरू किहिस रोवनि भुकुरनि।।''

उपर्युक्त रचना में गरीब श्रमिक परिवार के भूख से विह्वल एक शिशु का जो चित्र खींचा गया है, वह अविस्मरणीय है। पं0 वंशीधर शुक्ल अवश्य ही ग्राम्य-संस्कृति के अनुपम चित्रकार हैं। अवध की ग्राम्य-संस्कृति का एक और चित्र प्रस्तुत है जिसमें दर्शाया गया है कि किसान की गृहिणी सुबह से शाम तक क्या-क्या करती है-

''गोरुन का चारा पहुँचावइ, लरिकन का फुसिलावइ,
सगरे घर का कामु चलावइ पति का अदबु बजावइ।
चकिया पीसइ, धानु कुटावइ, कण्डा उपरी पाथइ,
टोला की दुइ चारि जनी मिलि बाहर निकरइ साथइ।
कपड़ा फींचइ बरतन माँजइ, घर की करइ सफाई,
रोटी करइ खवावइ सबका, अंजनु बनी लुगाई।''

अवध की यह लोक संस्कृति भारतीय संस्कृति

---

*काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से 'पं. वंशीधर शुक्ल के काव्य में ग्राम्य वर्णन' विषय पर शोधरत।

का अमूल्य अंग है। पं0 वंशीधर शुक्ल ने 'किसान की दुनियाँ', 'वहिया अगिलहीं', 'बेदखली', 'पाथर-वर्षा', 'सूखा', 'ऊजरखेरा' आदि रचनाओं में किसान की दशा का जो चित्रण किया है, वह हिन्दी अवधी काव्य में केवल उनका ही है, अन्य कवि वहाँ तक नहीं पहुँचे।

पं0 वंशीधर शुक्ल ने अपने काव्य में ग्राम्य-चित्रण और प्रकृति-चित्रण के अद्भुत वर्णन किये हैं। उन्होंने ग्राम्य-जीवन के जो चित्र प्रस्तुत किये हैं, वे अत्यंत मार्मिक और हृदयस्पर्शी हैं क्योंकि वह नगर में बैठकर नहीं, अपितु ग्राम्य-जीवन की गहराई में पूर्णतः निमग्न होकर चित्रित किये गये हैं। गाँव के सामाजिक व्यवहार और सांस्कृतिक रूपों की झाँकियाँ इनके काव्य में पर्याप्त हैं। इनके काव्य संस्कृति के रूप तो चित्रित करते ही हैं, वह ममत्व बोधपरक भी हैं। एक ग्राम-कन्या का रोम-रोम भारतीय संस्कृति में कितना भीगा हुआ है, यह ससुराल से नैहर जाती हुई एक कन्या के उद्गार में देखा जा सकता है जिसका नैहर के प्रति ममत्व सहज है-

''ऊबि परदा, घूंघट ते आजु, खोलि मुंह जिउ भरि हँसिबा, जाइ,
बहूरानी, भाभी ते आजु, बहिन, बिटिया फिरि बनिबा जाइ।
छोटकवा भइया पढ़िके आइ, जिया कहि पांइ छुई बेल्हराइ,
बड़कवा गांइनि तिर ते आइ, खूब मटकाई जिउ अस पाइ।
मिली गइया असि मइया रोइ, चूमि के छाती लेइ लगाइ,
देखि कै हमरीं दुबरी देंह, चोट बज्जरु असि लागी जाइ।
बिना पूछें सब जानी हालु, बिना बोले कहि देई बात,
टोय के नस-नस पूंछी दर्द, बतइबा का ससुरे की घात।''

वाक्य-वाक्य से कन्या के मन की टीस और ललक व्यक्त है। पं0 वंशीधर शुक्ल के जैसा ग्राम्य जीवन-चित्रण भी हिन्दी काव्य में उपलब्ध नहीं है। उनके काव्य का अधिकांश भाग ग्राम्य-जीवन से ही सम्बन्धित है। किसान, मजदूर, घर-दुआर, देहरी, गलियारा, चरागाह, खेत-खलिहान, हल, बैल, चरवाहा, हरवाहा, खेती-किसानी, तालाब, नहर, सूखा, अतिवृष्टि, बहिया, पाथर-वर्षा, अग्निकाण्ड, खँडहर, उजड़े गांवों के डीह, अमराइयाँ इत्यादि विषय उनके ग्राम्य-जीवन के अंग हैं। ग्राम्य-जीवन का एक मार्मिक दृश्य यहाँ प्रस्तुत है-

''बड़े सबेरे ते हरु नाधइँ, जोतइँ, बवइँ, मयावइँ,
फिरि खारा खुरुपा हँसिया लइ चारा घासइ धावइँ।
दुपहरिया माँ चारि पनेथी बड़की लोटिया पानी,
कबउँ चबैना, मट्ठा, सरबत अइसेइ गइ जिंदगानी।''

पं0 वंशीधर शुक्ल ने प्रकृति का जीवन के साथ वहुत सुन्दर सामंजस्य स्थापित किया है। उनके काव्य में अवध अँचल की प्रकृति पूर्ण तन्मयता के साथ प्रतिविम्वित हुई है। ग्राम-प्रकृति का कोई अंग उनसे छूटने नहीं पाया। उन्होंने सभी ऋतुओं को ग्राम-प्रकृति के संदर्भ में बड़ी वारीकी से देखा है और इस क्षेत्र में हिन्दी के सभी कवियों को बहुत पीछे छोड़ दिया है। शरद ऋतु की एक संश्लिश्ट योजना देखिए। एक तलैया का चित्र है-

''चौगिर्द पलक अस उरकी, बिच्चा दीदा अस पानी,
भीतर ते सिविता झाँकै, लहरिन पर लिहे जवानी।
अनगिन्तिन किरवा ब्वालैं, अनगिन्त कली मुँह ख्वालैं;
मिठलोनी सबै बयरिया, पी महक थिरकि के ड्वालैं।''

इसी प्रकार उन्होंने प्रत्येक ऋतु का अनूठा चित्रण किया है। प्रकृति का आलम्बन रूप आधुनिक अवधी कविता की प्रमुख प्रवृत्ति है। पं वंशीधर शुक्ल की कविताओं में भी प्रकृति का यह रूप प्रमुखता से चित्रित है। निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि ग्राम्य-जीवन का सौन्दर्य, ग्रामीण पर्यावरण का आकर्षण, किसान के जीवन की दशा-दुर्दशा, सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, राग-द्वेष, ग्रामीण संस्कृति और ग्रामीण परिवेश का जीवन्त लेखा उनकी रचनाओं में है, साथ ही अवध की संस्कृति और प्रकृति का सूक्ष्म एवं विशद चित्रण बहुत ही प्रभावी ढंग से प्रस्तुत हुआ है। उनका काव्य अवध के गाँवों से गहराई से जुड़ा हुआ था जिसके परिणामस्वरूप ग्राम्य संस्कृति, प्रकृति रीति-रिवाज, खान-पान तथा वेश-भूषा आदि सभी काव्य मंदाकिनी के महत्त्वपूर्ण प्रवाह बन गए। पं0 वंशीधर शुक्ल आद्यन्त बड़े जागरुक और सहृदयवर कवि रहे हैं। धरती से जुड़े होने के कारण ग्राम्य-जीवन का जो यथार्थ उन्होंने प्रस्तुत किया है, वह विलक्षण है।

बंशीधर शुक्ल : अवधी साहित्य के जाज्वल्यमान नक्षत्र

ज्ञानवती दीक्षित *

आधुनिक युग में आँचलिक उपन्यासों एवं कहानियों की भांति आँचलिक काव्य भी लिखा जा रहा है जो वास्तविकता से कोसों दूर होता है। भाषा का बनावटीपन जहां साफ झलकता है। ऐसे में कुछ ऐसे महान अवधी साहित्यकार हुए हैं , जो न सिर्फ लोक-संस्कृति का जीवंत रूप उभार देते हैं , बल्कि शहरी चित्रण से ऊबे जन-मन को भारतीय ग्राम्य-जीवन की फुहार से शीतल कर देते हैं। इन साहित्यकारों में प. बंशीधर शुक्ल का नाम आदर योग्य है। इन्होंने न सिर्फ अवधी भाषा की शान बढ़ाई है , वरन हिन्दी साहित्य का भण्डार भरा है। वे अवधी के आकाश के जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं। हिन्दी साहित्य सदैव उनका ऋणी रहेगा। अवध-ज्योति उन पर विशेषांक निकाल रही है , शुभकामनाओं सहित इस पुण्य यज्ञ में मैं भी अपने शब्दों की आहुति डाल रही हूँ।

बंशीधर शुक्ल के काव्य में ग्राम्य-प्रकृति का संश्लिष्ट चित्रण है। शरद ऋतु की छटा का एक दृश्य देखिये -

चौगिर्द पलक अस उरकी , विच्चा दीदा अस पानी ,
भीतर से सिविता झांकै , लहरिन पर लिहें जवानी।
अनगिनत चिरैया बोलैं ,अनगिनत कली मुहँ ख्वालैं ,
मिठलौनी सबै क्यारिया, पी महक मजे से ड्वालैं।
झरुआ , लोनी जरि पके, सिउरा मकरा पकि लहकैं ,
कतिकहरू, मुचमुचा, बुलबुलि, अर्हिन के तर-तर महकैं।
सोधवरू, बाकस, खरु, जनुका, फूला कांसन ते बढ़िकै,
लहराई सींक खसखस पर कुस झुकै , मयारी लोढ़कै।
नरकुल छड़ान पर फूला , झबरन पर फूलि रतासी ,
तालन की शोभा देखतै , भूलै सोभा अग्गासी।
गदही , नारी औ नरई , बड़तिन्ना म्वाछ उठाये ,
गुंथि रही पसाही तिन्नी, कुछ तर का घींच लचाये।
बिछि रही कमल की पतरी, सेरुकन के दाना पूरे ,
खिलि कोकना, कंज, गुजेरी , छहराई गाँव के घूरे।
गल्लिन मा फूल पतौरा , बेलझरा पके पियराने ,
मुर्हिन मुर्हिन ते मिलिके , मकरेवा झालरि ताने।

शुक्ल जी का प्रकृति चित्रण अन्यतम है . फागुन मास में ग्राम्य-प्रकृति के दृश्य देखें

गोहूँ , जौ गदरान , फरे अर्हिन के गौदा ,
खाले नंग-धडंग लड़ा ऊपर ते हौदा।
किसिम-किसिम की बेलि ,फूलि बिरवन पर लपटी ,
बनी पकरिया ठूंठ , रूस फूलन की दुपटी।
फूल-फूल फलि जांय, पत्र लारी टपकावैं ,
जमुन तरौना सजे , पत्र बढ़ि-बढ़ि लुकवावैं।
तितली बैठि उड़े फूल का धोखा लागै ,
मनौ पत्र का चूमि , कली कुछु कहि-कहि भागै।

बंशीधर शुक्ल ने सभी ऋतुओं का सहज-स्वाभाविक चित्रण किया है। एक चित्र ग्रीष्म ऋतु का देखें -

चला पछियौहा बनि-बनि लूह ,
रचावै बौड़रू चक्रव्यूह।
धूरि उड़ि-उड़ि के लागै ढूह ,
परी जंगल-जंगल मा कूह।
परा बिरवन मा ठेलगठेल ,
मनौ आवै बड़कैया रेल।
न कोई सुनै कोहू के बात ,
हवा घूमै घर-घर गुर्रात।

बंशीधर शुक्ल बसन्त ऋतु को पसंद नहीं करते। उन्होंने लिखा है

आवति बसंतु है बसंतु बना गली-गली ,
खौफ खाई खेत सरसों के पियराईगे।
जरि-जरि ढाक , जीभ काढ़ि- काढ़ि हाँफै लाग।

शुक्ल जी को वर्षा ऋतु सर्वाधिक पसंद है। वे

---

*१६६ , प्रतिभा निवास , रोटी गोदाम , सीतापुर

वसन्त और बरसात की तुलना करते हुए कहते हैं

कहाँ मधुऋतु का सूखा मासु ,
कहाँ बरखा की हरियाली।
कहाँ नस-नस मा निचुरनि लाग ,
कहाँ छरकै बदरी काली।

वर्षा ऋतु तो कृषकों के लिए वरदान है -

देखि खिसियाय रहा मधुमास ,
कहै धनि-धनि दाता चौमास।

वर्षा ऋतु उन्हें सबसे ज्यादा प्रिय क्यों है इसका कारण गिनाते हैं -

सबते ज्यादा चौमासु सगा ,
सबते ज्यादा बैरी बसंतु।
दिन राति जरावै घर फुंकवावै ,
गर्मी का कुछ ना आदि अंतु।
सबते बढ़िया सावन-भादो ,
बरदान देंयि मन चीता।

जाड़े के दिनों में उत्तर भारत के गरीबों की क्या दशा होती है। शुक्ल जी ने इसे बड़ी मार्मिकता से उकेरा है

अम्मा रोटी, अम्मा रोटी।
जाड़े का महिना, चलइहवा, सपनेउ मा नींद न आवइ।
आगी अधबुझ, पैरा अधभिज, आतैं खौंखाइ पतोहू की,
मारे मसट्ट परि रहा बापु, अम्मा कहि रहीं कथा छोटी।
बालक माँगइ अम्मा रोटी।

अवध की संस्कृति का अद्भुत चित्र शुक्ल जी ने खींचा है। एक उदाहरण देखें

गृहस्थी के इंजन भारतीय नारी की ऐसी छवि अन्य कविगों ने कहाँ देखी ?अवध की यह लोक संस ति भारतीयता का अमूल्य अंग है। बंशीधर शुक्ल जी इस चेतना के महान संवाहक हैं। नैहर के प्रति ग्राम्यकला का ममत्व शुक्ल जी की कविता में देखें

ऊबि पर्दा , घूँघट ते आजु खोलि मुँह जिउ भरि हँसिबा जाय ,
बहू रानी , भाभी ते आजु , बहिन , बिटिया फिरि बनिबा जाय।
छोटकवा भईया पढ़ि के आइ , जिया कहि पांइ छुई बेल्हराइ,
बड़कवा गाइनि तिर ते आइ , खूब मटकाई जिउ अस पाइ।
मिली गैया अस मैया रोइ , चूमि के छाती लेई लगाइ ,
देखि के हमरी दुबरी देह , चोट बज्जरू अस लागी जाइ।

समकालीन कवियों में व्यंग्य लिखने में सबसे अधिक पटु वंशीधर हैं। शंकर वंदना शीर्षक रचना में आज के समाज पर कवि की फब्ती देखिये -

सेवतिउ कोई समाज , ऋषी की पदवी पौतिव ,
होतिव शिखाविहीन , अली आलिम कहवौतिव।
गोरा होत सरूप , लाटि की गद्दी देतेन ,
होतिउ डिगरीदार, चट्ट बापू कहि देतेन।
सब गुन हवै फैशन तजे, घूमि रहेव फटहा बने ,
को माने नेता तुम्हें , नेहरू जी के सामने।

डॉ० सम्पूर्णानन्द उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। उस समय वंशीधर शुक्ल समाजवादी दल से उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य थे। उस समय वे एक दोहा पढ़ा करते थे-

कतल होहिं , डाके पड़ें , बढ़ें द्वंद्व पर द्वंद्व।
जब पूछै कोई कहौ जय सम्पूर्णानन्द।।

तत्कालीन गृह, शिक्षा तथा सूचना मंत्री श्री कमलापति त्रिपाठी के लिए शुक्ल जी एक दोहा पढ़ा करते थे

गृह , शिक्षा औ सूचना तीनों कार्य महान।
तीनों के चौपट करन , कमलापति भगवान।

शुक्ल जी स्वतंत्रता संग्राम के वीर सेनानी , संघर्षशील व्यक्तित्व थे। उनके बिना कोई समकालीन कवि सम्मलेन पूर्ण नहीं माना जाता था। उनकी लोकप्रियता का कारण उनकी ओजस्वी राष्ट्रीय रचनाओं के साथ-साथ व्यंग्य की चुटीली रचनाएं थीं। मंच पर उनकी लोकप्रियता का कारण उनका पढ़ने का अनोखा अंदाज भी था। वे सामंतवादी प्रवृत्ति के घोर विरोधी थे और तत्कालीन कांग्रेसी नेताओं की खूब खिल्ली उन्होंने उड़ाई। कांग्रेसी कुल्हड़ तो उन्हीं का मशहूर कलाम रहा। वे मूलतः प्रगतिवादी विचारधारा के कवि थे और विद्रोह उनके स्वभाव में थी। उन्होंने पराधीन भारत में किसान और मजदूरों के शोषण पर प्रभत् रचनाएँ लिखीं। उनका योगदान अवधी साहित्य में सदैव स्मरण किया जाएगा।

(1)

बंसीधर कै बात निराली

डॉ0 भारतेन्दु मिश्र

बंसीधर कै बात निराली।
उनकी कबिता माँ झलकति है सब किसान की
दुनिया,
चमकि रहे हैं गाँव देस के मोलहे-बुधई झुनिया।
टिका न कौनौ उनके समुहे ,
तिकडमबाज बवाली। बंसीधर कै ...।
राजा की कोठी माँ की बिधि लगा खून का गारा ,
सगरी कथा बताएनि दउआ, किसान कस हारा।
नए बिचारन की कबिताई ,
जस भोरहे की लाली। बंसीधर कै ...।
गाँव देस सब जानै इनका मनई सबते नीक ,
अवधी क्यार निराला हैं ई नयी बनाएनि लीक।
उनकी खुसबू ते महकति है ,
हर बिरवा -हर डाली। बंसीधर कै ...।

(2)

अवधी सम्राट तुम्हीं हो

शान्ति शरण मिश्र 'व्यंग्य सीतापुरी'

जिस तरह चमकते नभ में हैं , सूरज चाँद सितारे ,
तुम उसी तरह चमकोगे होंगे गुणगान तुम्हारे।
साहित्य-सृजन की तुमने जो सुरभित बेल लगाई ,
वह फैलेगी पीढ़ी , दर पीढ़ी भाई।
माँ सरस्वती के सेवक अवधी साहित्य प्रणेता ,
साहित्य-सुधी , कवि पंडित , जन-जन के प्यारे नेता।
साहित्य तुम्हारा पढ़कर आह्लादित होते ज्ञानी ,
आनन्द बिन पढ़े लेते , अति सरल तुम्हारी बानी।
हर विषय लिखा है तुमने, सब वेद शास्त्र गुन करके,
तुम हो कवियों के दिनकर, कवि बनते तुमको पढ़के।
साहित्य यथार्थ तुम्हारा, जग देखा भाला तुमने ,
क्या कोई भी लिख सकता जो कुछ लिख डाला तुमने।
वह ग्राम मन्यौरा प्यारा , वह राम मड़य्या प्यारी ,
है तपस्थली कवियों की , धरती पर सबसे न्यारी।
अवधी सम्राट तुम्हीं हो , बंशीधर नाम तुम्हारा ,
तुमसे न हुआ है बढ़कर , साहित्य जगत में न्यारा।

(3)

वाणी पुत्र महान

रंगनाथ मिश्र 'सत्य'

वाणी पुत्र महान थे तुम।
राष्ट्रभक्ति के अग्रदूत ,
भारत जननी के अमर पूत।
आजादी के शान थे तुम।
बापू के सच्चे अनुयायी ,
ढ़ता सुभाष से थी पायी।
जन-जन के अरमान थे तुम।
माँ को कारा से मुक्त किया ,
बदले में कुछ भी नहीं लिया।
गौरव थे अभिमान थे तुम।
मंचों पर धूम मचाई थी ,
जेलों में अलख जगाई थी।
हिन्दी के नव प्राण थे तुम।
जीवन संघर्षों में बीता ,
तुम गुनते रहे सदा गीता।
हम सबकी पहचान थे तुम।

(4)

भाषा खरी थी

-डॉ0 अशोक 'गुलशन'

चित्त सुकोमल वाणी में ओज था ,
दीनों के हित हुँकार भरी थी।
अन्याय करें उनके लिए विष ,
प्रेमियों हेतु सुधा गगरी थी।
'राम मड़य्या' के संत थे आप ,

अनुभूति की डार हरी की हरी थी।
अवधी काव्य के थे सम्राट ,
भाव के साथ ही भाषा खरी थी।

(5)
ये हैं पूरे सविता

-शारदा प्रसाद वर्मा 'भुसुण्डि'

प्रश्न

चुंधी आँख बदन है ऐसा ज्यों खंडहर का भीटा ,
मुख पर चेचक दाग घने हैं , जैसे खंजर ईंटा।
अंकुश नहीं किसी का इन पर करते हैं मनचाहा ,
काली कमरी में लगते हैं; सचमुच ये चरवाहा।
देहाती भाषा की रचना पढ़कर खूब हँसाते ,
ये हैं कौन सिनेमाघर की खिल्ली खूब उड़ाते।

उत्तर

शंकर जी के ससुर सरीखेये; उदार हैं भाई ,
कांग्रेस के पीछे पड़कर फूँकी सभी कमाई।
कृषकों के दुःख-अन्धकार-हित हैं पूरे सविता ,
'महराजा की कोठी' इन की सबसे सुन्दर कविता।
खादी से भी शुद्ध आचरण जिनका हैं हम पाते ,
ये बंशीधर शुक्ल श्रेष्ठ कवि अवधी के कहलाते।

(6)
जो कुछ हूँ जनता का ही हूँ

(पं. वंशीधर शुक्ल का आत्मपरिचय)

स्व. ड०. बृजेन्द्र अवस्थी

संघर्ष भरा जोवन मरा , विपदाओं का हमराही हूँ .
शासन से लड़ना व्रत मेरा, जनता का एक सिपाही हूँ।
मैं लड़ने निकला हूँ कपटी-छलियों के क्रूर-कुभावों से ,
मैं लड़ने निकला हूँ बगुला-भक्तों के घातक दावों से।
मैं लड़ने निकला हूँ लीडरशाही के धूर्त सुझावों से ,
मैं लड़ने निकला हूँग की अन्यायी परम्पराओं से।
मैं मालिक को नौकर-पद पर सिर घिसते देख नहीं पाया,
मैं जनता को नौकरशाही में पिसते देख नहीं पाया ,
श्रमकार-किसानों के निरीह दम घुटते देख नहीं पाया ,
मैं युग के क्रूर लुटेरों से युग लुटते देख नहीं पाया।
इस लड़ने को निकल पड़ा दुखियों की देख तबाही हूँ।
मैं कृषकों-श्रमिकों का सच्चा सेवक हूँ, एक सिपाही हूँ।
जो नेता पासे फेंक फेंक जनता को छलते रहते हैं ,
अपनी चाहों से दुखिया के अरमान कुचलते रहते हैं ,
जिनकी वोटो को पा-पाकर कौंसिल में पलते रहते हैं ,
विश्वासघात उनसे करके उनको ही दलते रहते हैं।
झोपड़ियों का झांसा देकर जो अपने महल उठाते हैं ,
गंगाजल की कसमें खाकर जो मदिरा नित्य उड़ाते हैं ,
चन्दा का नाम बताते हैं थैली डकारते जाते हैं ,
जो नेता राम-राम कहकर केवल हराम का खाते हैं।
उनके मुहँ काले करने को मैं लिए कलम की स्याही हूँ।
दुष्टों से लड़ना है मुझको, जनता का एक सिपाही हूँ।
यह होश सँभाला है जबसे मैं तबसे लड़ता आया हूँ ,
जो बाधाएँ बनकर आये उन सब से लड़ता आया हूँ ,
क्या बतलाऊं जनता के हित मैं कब से लड़ता आया हूँ,
हर अत्याचारी शासन के हर ढब से लड़ता आया हूँ .
संघर्ष बने सहचर मेरे पीड़ाएँ सच्ची संगिनि हैं ,
विपदाएँ रहती साथ-साथ बनकर मेरी अर्धांगिनि हैं ,
फूटी दिवाल टूटे छप्पर, ये ही हैं मेरे रंगमहल ,
दुखियों की आह-कराहें ही उस रंगमहल की रंगीनि हैं।
उस राजकिले का राजा मैं, सच मानो, मुकुट बिना ही हूँ।
जनता मेरी, मैं जनता का, उसका ही राज सिपाही हूँ।
जो बिच्छू की आदत डाले बस डंक मारने वाले हैं ,
विश्वासघात करके अपना स्वारथ सँवारने वाले हैं ,
खुद आग लगाकर कुटिया में जग को पुकारने वाले हैं,
मुहँ फूलों के बाग , बगल में नाग धारने वाले हैं।
जो पार्टी में पार्टीबंदी अपनी फैलाते रहते हैं ,
वे साँप बने हैं जो बिल में भी टेढ़े जाते रहते हैं ,
बर्रो से सबको काट-काट जो दुःख पहुंचाते रहते हैं ,
अपनी चींटी के पंख जमा मद में मँडराते रहते हैं।
मैं देने को उठ खड़ा हुआ बस उन्हें मौत मनचाही हूँ।

जनता की सेवा में तत्पर उसका ही एक सिपाही हूँ।
जो स्वतंत्रता के सैनिक थे, वे दानों को मुहताज बने,
जो रँगे सियार स्वार्थी थे वे शासन के सिरताज बने ,
तुम आँखें खोल स्वयं देखो रक्षक ही भक्षक आज बने,
हा! जनता की गौरैयों के पहरुये शिकारी बाज बने।
औरों को राह कहाँ मिलती जब नेता ही गुमराह मिले,
जनता के सुख के धोखे में इससे ही अंतर्दाह मिले ,
भारत की नाव डूबती है ,लोभी-कपटी मल्लाह मिले ,
बस झाँसा प्रजातंत्र का था पर शासक तानाशाह मिले।
मैं चला मिटाने उन धोखेबाजों की तानाशाही हूँ।
भारत जनता की सेना का मैं सच्चा एक सिपाही हूँ।
चोटों पर चोटें खाए हूँ , शासनी-जंग से घायल हूँ ,
बाहर की फिर क्या बात करूँ जब अन्तरंग से घायल हूँ,
राणा सांगा के अस्सी थे अस्सी हजार भी खा लूंगा ,
भय नहीं मुझे है घावों से मैं अंग-अंग से घायल हूँ।
पर आगे कदम बढ़ाया तो पीछे न कभी हट सकता हूँ,
आ जाए सामने भले काल हँसकर सम्मुख डट सकता हूँ,
जिस कारण इतने घाव सहे उससे न कभी हट सकता हूँ,
दोनों के कष्ट मिटाने को मैं तिल-तिलकर कट सकता हूँ।
मरने की कुछ परवाह नहीं मैं अमर पंथ का राही हूँ।
जनता पर सब कुछ न्योछावर उसका ही एक सिपाही हूँ।
है जन्म मन्यौरा का मेरा जिसका पानी कुछ तीखा है ,
निज स्वाभिमान पर मर-मिटना मैंने पुरखों से सीखा है ,
खल के आगे अब तक मैंने निज भाल न झुकते दीखा है,
ललकार मौत से भिड़ जाना मेरे हित खेल सरीखा है ,
लम्पट की तरह न पीछे से छिपकर दुश्मन को मारा है,
जनता-भक्षक मदमातों का मद झारा और उतारा है ,
मेरे गरीब भाइयों ! सदा बंशीधर शुक्ल तुम्हारा है।
जनता का ही पा अतुल प्रेम बन पाया वो उत्साही हूँ।
जनता की मेरी सेना में जनता का एक सिपाही हूँ।
मैं अपने मन में जनता का करके प्रण धारण लड़ता हूँ,
मैं हरने को दुखिया जनता के कष्ट निवारण लड़ता हूँ,
जनता के हित को लेकर , जनता के इंगित को लेकर,
जनता के प्रबल शत्रुओं से जनता के कारण लड़ता हूँ।
जनता ही मेरी सेवा है , जनता का बल मेरा बल है ,
जनता की शुभकामना बनी सब अस्त्रों-शस्त्रों का दल है,
मेरी जय जनता की जय है जनता ही मेरा सम्बल है ,
मेरे अभियानों का स्वरूप जनता की इच्छा का फल है।
जैसा भी हूँ जितना भी हूँ जो कुछ हूँ जनता का ही हूँ।
जनता से बाहर मैं क्या हूँ उसका ही एक सिपाही हूँ।

(7)

बासंती पंचमी निराला और वंशीधर

-सत्यधर शुक्ल

रलमल अचल लहराता है, झलमल श्यामल अलकें,
कल-कल बोल रही वीणा, चंचल दृग चल पलकें ,
रंग-बिरंगे हरित पीत अमृतोमय वमन सँवारे ,
सुरमीले सुमनों की माला मुकुट शीश पर धारे ,
फसलों के पृष्ठों की पुस्तक पलट रही सुखदायी ,
और न कोई यह तो अपनी माँ सरस्वती आयी।
अच्छा, आज वसन्त पंचमी , माँ का जन्म-दिवस है ,
दीख रहा परिव्याप्त रमा पर मादक रस ही रस है ,
समझ रहे तुम, शायद करती प्र ति उसी का स्वागत ,
किन्तु नहीं , यह अपनी जननी का ही पुष्प समागत।
हरियाली यह नहीं, स्नेहमय माँ की ममता लाई ,
सरसों फूली नहीं पताका माता की फहराई।
ऊषा की अरुणिमा नहीं, माँ के तन की गोराई ,
नील-गगन यह नहीं, अम्ब की कुन्तल छवि लहराई।
नाद-निनाद-गीत जितने स्वर नभ में गूंज रहे हैं ,
माँ की वीण-गंगोत्री से निर्झर फूट रहे हैं।
कमल-कुमुदयुत नहीं जलाशय, माँ की विभा विमल है,
वसुंधरा का नहीं, लहराता जननी का आँचल है।
दस विग्वधुओं द्वारा इसका शुभयश गाया जाता ,
यही हमारी हंसवाहिनी, यह ही भारत माता।
जान रहे हो माँ धरती पर व्यर्थ नहीं आई है ,
प्रेम-कृपा-करुणा-उदारता के घट भर लाई है।

एक बार प्रति वर्ष इसी विधि माँ आया करती है ,
प्रिय-दुलार-पुचकार सुतों को दे जाया करती है।
और देखती कमी कला वैभव की जब भूतल पर ,
आती उतर प्रसार हेतु तब अपना रूप बदल कर।
कला-सृजन की जब जन नद की हुई प्रथम अभिलाषा,
मिला तभी अवतार ग्रहण का अवसर अच्छा-खासा।
तमसा-तट पर जल विहार में क्रौंच-निधन अवलीका ,
तभी आदि कवि बन माता ने निषाद को टीका।
फिर तो रूप कला का पाने लगा निखार प्रतिक्षण ,
किन्तु कभी यह लगी कि माँ का काँप उठा कोमल-मन।
तथा महाकवि कालीदास बन फिर सरस्वती आई ,
जिसकी प्रभा भूमि से नभ तक सजल-मेघ बन छाई।
यद्यपि वह उर्वशी सरीखी वसुधा-तल पर उतरी ,
मालविका-सी अग्निमित्र की प्रेम-अग्नि बन विखरी।
बन कुमार की अपनी, विलगी, शकुन्तला-सी रोई ,
फिर भी रघुकुल-यश-वर्णन में वह अपने में खोई।
और आधुनिक युग में माँ-यश दो रूपों में छाया ,
एक खड़ी बोली में दूजा अवधी में मुस्काया।
जनमा एक मेदिनीपुर दूसरा मन्यौरापुर में ,
एक राशि के गाँव मिले, प्रकटे दोनों सम-घर में।
एक रोहिणी का वेटा बलराम वीर हलदारी ,
और देवकी-पुत्र दूसरा श्याम-सदृश व्रतधारी।
किन्तु यशोदा-हिन्दी माँ का दूध पिया दोनों ने ,
औ साहित्य-नन्द आँगन को महक दिया दोनों ने।
दोनों की ही एक जन्मतिथि, एक प्रगति बासंती ,
दोनों ही जीवंत, गिरा भी दोनों की जीवन्ती।
दोनों हरिश्चन्द्र से साधक, कर्ण सरीखे दानी ,
दोनों जन्मजात विद्रोही, दोनों ही अभिमानी।
चपला-कमला का लालच दोनों को झुका न पाया ,
प्रबल-प्रलोभन दोनों ने ही पांवों से ठुकराया।
दोनों अल्हड़,दोनों फक्कड़, दोनों ही दीवानें ,
अपनी-अपनी धुन के पक्के, अपने में मस्ताने।
दोनों भ्रष्टाचार विरोधी, दोनों न्याय विधायक ,
मानवता के अमर पुजारी, संस्कृति के उद्गायक।
दोनों ही निर्भीक सिंह से फिर भी परम अहिंसक ,
नैनू जैसा हृदय शत्रु के लिए मगर दृढ़-पावक।
दोनों ही असहायों पर सर्वस्व लुटाने वाले ,
दोनों दीनों-कृषक-याचकों के सनेह में ढाले।
दोनों ही धरती पर नूतन स्वर्ग बुलाने वाले ,
दोनों सत्कर्मों से अपना भाग्य बनाने वाले।
दोनों ने ही प्रतिभा के वर एक सरीखे पाए ,
एक नव्यता, एक दिव्यता, एक भव्यता लाए।
दोनों ने ही पायी ऊर्जा, आभा शक्ति वराबर ,
दोनों में ही देशभक्ति जन की अनुरक्ति वराबर।
दोनों फिक्र हीन , पहनावा अद्भुत सीधा-सादा ,
एक निराला कहलाया तो एक सभी का दादा।
हिन्दी का यदि महाप्राण है एक महाकवि न्यारा ,
तो अवधी-सम्राट राष्ट्रकवि दूजा सबका प्यारा।
सूर्य सदृश है कान्त एक यदि रश्मि-जाल फैलाए ,
तो दूजा बंशीधर जैसा शुक्ल सुयश बिखराए।
एक खड़ी बोली का बंशीधर है, युग निर्माता ,
एक निराला अवधी का, जन-जन का भाग्य-विधाता।
अन्य नहीं इनकी समता का मनःभूप हैं दोनों ,
एक दूसरे की ही उपमा, एक रूप हैं दोनों।
इसका अमित प्रताप न बांधा जा सकता शब्दों में ,
इनका शुभ-ऐश्वर्य लिखा जाएगा युग-अब्दों में।
जब तक घूमा-फिरा करेंगे सूरज-चाँद-सितारे ,
गंगा-गोदावरी रहेंगी बहती पकड़ किनारे।
धरा रहेगी, सिन्धु रहेगा, यह आकाश रहेगा ,
तब तक इनकी धवल कीर्ति का दीप्त प्रकाश रहेगा।
जयति निराला, जय बंशीधर, जय-जय-जय-युग-त्राता ,
जयति-जयति-जय हंसवाहिनी,जय-जय भारत माता।



वंशीधर शुक्ल की रचनाएँ

उठ जाग मुसाफिर भोर भई

उठ जाग मुसाफिर भोर भई !
अब रैन कहां जो सोवत है
जो सोवत है सो खोवत है
जो जागत है सो पावत है
टुक नींद से अंखियां खोल जरा
पल अपने प्रभु से ध्यान लगा
यह प्रीत करन की रीत नहीं
जग जागत है तू सोवत है
तू जाग जगत की देख उड़न ,
जग जागा तेरे बंद नयन ,
यह जन जागृति की बेला है ,
तू नींद की गठरी ढोवत है
लड़ना वीरों का पेशा है ,
इसमें कुछ न अंदेशा है .
तू किस गफलत में पड़ा-पड़ा ,
आलस में जीवन खोवत है .
है आजादी ही लक्ष्य तेरा ,
उसमें अब देर लगा न जरा .
जब सारी दुनिया जाग उठी ,
तू सिर खुजलावत रोवत है .
उठ जाग मुसाफिर! भोर भई
अब रैन कहां तू सोवत है

कदम-कदम बढ़ाए जा

कदम-कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गाये जा
ये जिन्दगी है कौम की, तू कौम पे लुटाये जा।
उड़ी तमिस्त्र रात है, जगा नया प्रभात है ,
चली नयी जमात है, मानो कोई बरात है ,
समय है मुस्कुराये जा, खुशी के गीत गाये जा
ये जिन्दगी है कौम की, तू कौम पे लुटाये जा।
जो आ पड़े कोई विपत्ति मार के भगायेंगे ,
जो आये मौत सामने तो दांत तोड़ लायेंगे।
बहार की बहार, बहार ही लुटाये जा।
कदम-कदम बढाए जा, खुशी के गीत गाये जा।
जहां तलक न लक्ष्य पूर्ण हो समर करेंगे हम ,
खड़ा हो शत्रु सामने तो शीश पै चढ़ेंगे हम ,
विजय हमारे साथ है, विजय ध्वजा उडाये जा।
कदम-कदम बढाये जा, खुशी के गीत गाये जा।
कदम बढ़ें तो बढ़ चलें आकाश तक चढ़ेंगे हम ,
लड़ें हैं , लड़ रहे हैं तो जहान से लड़ेंगे हम;
बड़ी लड़ाइयाँ हैं तो, बड़ा कदम बढाये जा।
कदम-कदम बढाए जा, खुशी के गीत गाये जा।
निगाह चौमुखी रहे विचार लक्ष्य पर रहे ,
जिधर से शत्रु आ रहा उसी तरफ नजर रहे ,
स्वतंत्रता का युद्ध है, स्वतंत्र हो के गाये गाये जा।
कदम-कदम बढ़ाए जा खुशी के गीत गाये जा
ये जिन्दगी है कौम की, तू कौम पे लुटाये जा।

उठो सोने वालो! सबेरा हुआ है

उठो सोने वालो ! सबेरा हुआ है
वतन के फकीरों का फेरा हुआ है।
जागो अब निराशा निशा खो रही है ,
सुनहली सी पूरब दिशा हो रही है ,
उषा की किरण कालिमा धो रही है ,
न कौम कोई कहीं सो रही है
तुम्हें किसलिए मोह घेरा हुआ है।
उठो सोने वालो ! सबेरा हुआ है
जवानो ! जगो कौम की जान जागो ,
पड़े किसलिए देश की शान जागो ,
शहीदों की सच्ची सुसंतान जागो ,
हटा दूर आलस-अँधेरा हुआ है।
उठो सोने वालो ! सबेरा हुआ है
उठो देवियों ! वक्त खोने न देना ,
कहीं फूट के बीज बोने न देना ,
जगे जो, उन्हें फिर से सोने न देना
कभी राष्ट्र अपमान होने न देना
घड़ी शुभ मुहूरत का डेरा हुआ है।
उठो सोने वालो ! सबेरा हुआ है
नई रोशनी मुल्क में जग रही है ,
युगों बाद फिर हिन्द-माँ जग रही है

खुमारी बचा प्राण को भग रही है ,
दिलों में निराली लगन लग रही है
मुसीबत से अब तो निबेरा हुआ है।
उठो सोने वालो ! सबेरा हुआ है
हवा क्रान्ति की झूमती डाली-डाली ,
बदल जाने वाली है शासन प्रणाली
जगो देख लो कैसी रौनक निराली ,
सितारे गए आ गया अंशुमाली
घरों में , दिलों में उजेरा हुआ है।
उठो सोने वालो ! सवेरा हुआ है

सिर बाँधे कफनवा हो, शहीदों की टोली निकली

सिर बाँधे कफनवा हो शहीदों की टोली निकली।
सत्तावन में गदर हुआ था , इसी हिन्द के बीच,
बहादुरशाह के चारो बेटे मरे अनोखी मीच,
नीति विष घोली निकली। सिर बाँधे कफनवा हो
अंग्रेजों के छक्के छूटे , शेखी मिल गयी धूर,
नानाजी के मुकाविले पर डटे न कोई शूर,
वीरता पोली .निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
नाना जी की बेटी मैना जिंदा दई जलाय,
दुर्गा , पद्मावती सरीखी स्वर्ग गयीं हरषाय,
उन्हीं की हमजोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
स्वतंत्रता प्यारी की खातिर निकल पड़े राजपूत
झाँसी वाली रानी भी तो बाँध कमर मजबूत,
डाल गलझोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
गाँधी जी का शस्त्र अहिंसा सत्याग्रह संग्राम,
चरखा चक्र सुदर्शन छूटा मचा विश्व कोहराम,
ब्रिटिश की ठिठोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
भूखे रहकर प्राण दे गया हाय यतेंदर भ्रात,
बोरास्तल लाहौर में दिया अंग्रेजों को मात,
जनाजे की डोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
पापी डायर की फायर से भूमि हो गयी लाल,
जलियाँवाले बाग के अन्दर जूझा मदनगोपाल,
कलेजे बीच ग़ोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
लगान कर दो माफ हिन्द में हुआ जभी ऐलान,
सबसे पहले कमर बांधकर रखे हाथ पर जान,
अकेली बारडोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो
बिस्मिल, रोशन, लहरी औ अशफाक अली से वीर,
आजादी लेने निकले थे फाँसी चढ़े अखीर,
शक्ति अनतोली निकली, सिर बाँधे कफनवा हो

जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा

अमर भूमि से प्रकट हुआ हूँ , मर-मर अमर कहाऊंगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा।
तुम हो जालिम, दगाबाज, मक्कार, सितमगर अय्यारे,
डाकू, चोर, गिरहकट, रहजन, जाहिल, कौमी गद्दारे,
खूंगर, तोतेचश्म, हरामी, नावकार औ बद्कारे,
दोजख के कुत्ते खुदगरजी, नीच, जालिया, हत्यारे;
अब तेरी फरेबबाजी से रंच न दहशत खाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा।
तुम्ही हिन्द में बन सौदागर आये थे टुकड़े खाने
मेरी दौलत देख-देखकर लगे दिलों में ललचाने
लगा फूट का पेड़ हिन्द में अपनी ईर्ष्या बरसाने
राजाओं के मंत्री फोड़े लगे फौज को भड़काने
तेरी काली करतूतों का भंडाफोड़ कराऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा।
हमें फरेबी जाल सिखाकर, भाई-भाई लड़वाया
सकल वस्तुओं पर कब्जाकर हमको ठेंगा दिखलाया
चर्सा भर ले भूमि, भूमि भारत का चर्सा खिंचवाया
बिन अपराध हमारे भाई हा ! शूली पर चढ़वाया।
एक-एक बलिवेदी पर अब लाखों शीश चढ़ाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा।
बंग भंग कर नन्द कुँवर को किसने फाँसी चढ़वाई ?
किसने मारा खुदीराम को झाँसी की लक्ष्मीबाई ?
नाना जी की बेटी मैना किसने जिंदा जलवाई ?
किसने काटा टिकट जीत सिंह पदमिनी दुर्गाबाई ?
अरे अधर्मी इन पापों का बदला अभी चखाउँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाउँगा।
किसने श्री रणजीत सिंह के बच्चों को कटवाया था ?
शाह जफर के बेटों के सर कटे उन्हें दिखलाया था ?

अजनाले कूटों में भोले भाई को तुपवाया था ?
अच्छन खां औ शम्भु शुक्ल सर रेती से रितवाया था?
इन करतूतों के बदले लन्दन पर बम बरसाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
पेड़ इलाहाबाद चौक के अभी गवाही देते हैं
खूनी दरवाजे दिल्ली के लहू-घूंट पी लेते हैं
नव्वाबों के ढहे दुर्ग जो मन मसोस रो लेते हैं
गाँव जलाए गए देखकर आफताब रो लेते हैं
उबल पड़ा है खून आज एकदम शासन पलटाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
अवध-नवाबों पर रजनी में किसने डाका डाला था ?
वाजिद अली शाह के घर का किसने तोड़ा ताला था?
लोने सिंह, सहिया नरेश को किसने देश निकाला था?
कुँवर सिंह , वरबेनी माधव राना का घर घाला था ?
गाजी मौलाना के बदले तुझ पर गाज गिराऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
किसने बाजीराव पेशवा को गायब करवाया था ?
बिन अपराध किसानों पर कसकर गोले बरसाया था?
किला ढहाया चहलारी का राज-पाट छिनवाया था ?
धुंध, पन्त, ताँतिया, हरी सिंह नलवा गर्द कराया था?
इन नरसिंहो के बदले नरसिंह रूप प्रकटाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
डाक्टरों से चितरंजन को जहर दिलाने वाला कौन ?
औ पंजाब केसरी सिर पर लट्ठ चलाने वाला कौन ?
पितु से सम्मुख पुत्र रत्न की खाल खिंचाने वाला कौन?
थूक-थूक करके जमीन पर हमें चटाने वाला कौन ?
एक खून के बदले तेरा घट भर खून बहाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
किसने हरदयाल सावरकर अमरीका में घिरवाया ?
वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र से प्रिय स्वदेश को छुड़वाया ?
रासबिहारी , मानवेन्द्र को औ महेंद्र को बँधवाया ?
अंडमान टापू में बंदी देश भक्त सब भिजवाया ?
अरे क्रूर ढोंगी के बच्चे तेरा वंश मिटाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
अमृतसर जलियान बाग का, घाव भभकता सीने पर,
देशभक्त बलिदानों का वह रक्त धधकता सीने पर,
गली-नालियों का वह जिंदा रक्त उबलता सीने पर,
आँखों देखा जुल्म नक्श है क्रोध उबलता सीने पर,
दस हजार के बदले तेरे तीन करोड़ मिटाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
बिस्मिल, रोशन , लहरी औ अशफाक चढ़ाया सूली में
राजगुरु, सुखदेव, भगत सिंह काट बहाया सतलज में
गली-गली में हिन्दू-मुस्लिम युद्ध रचाया शहरों में
देख निहत्थे विद्यार्थी को मारा रक्षा करने में
भूखों मारा श्री यतीन्द्र को यह न सहन कर पाऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
घरसाना शोलापुर के नासूर कह रहे नस-नस पर
सरहद्दी पेशावर के वे जुल्म नक्श हैं नक़्शे पर
मैला उठवाया गाँधी से छिड़का तेल जवाहर पर
अबलाओं की इज्जत लूटी लठ्ठ चलाया बच्चों पर
जेलों का इतिहास जेल में करके बंद बताऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।
क्या-क्या त्य बयान करूँ इस जाति फिरंगी कायर की
शेष-शारदा बरन सके नहिं जुवां में ताकत शायर की
बना खड़ा आसमां धुएं से बंदूकों के फायर की
खून उबल पड़ता है एकदम करतूत याद कर डायर की
सारी दुनिया तुझे बचावे फिर भी मार गिराऊँगा।
जब तक तुझको मिटा न दूँगा चैन न किंचित पाऊँगा।

(ब्रिटिश काल में ऐसी रचना का लिखना कितने बड़े साहस और निडरता का काम रहा होगा , आज इसकी कल्पना करना भी मुश्किल है। ऐसी आक्रोश व तेवर से भरी हुई कोई दूसरी रचना पूरे हिन्दी साहित्य में शायद ही कोई हो। यह रचना उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी द्वारा प्रकाशित कराई गई थी। पर्चे सम्पूर्ण देश में बांटे गए थे। रचना में कवि का नाम नहीं छपा गया था। शासन अंत तक रचनाकार का पता नहीं लगा सका। प. जवाहर लाल नेहरू ने इस रचना का शीर्षक 'खूनी पर्चा' दिया था। 'बंशीधर शुक्ल रचनावली' में इस रचनाकाल मार्च 1928 ई. दिया गया है, किन्तु संभवतः यह रचना सन 1932-33 ई. के आस-पास लिखी गई होगी, क्योंकि इस रचना में भगत सिंह की शहादत का जिक्र आया है)

आ पगले गदर मचाएँ

आ पगले! गदर मचाएँ। ले शक्ति संभल , सम्मुख दंगल,
फँस गया शत्रु गहरे दल-दल; है निबल-विकल नहिं सके संभल,
ओ वीर ! उछल , कर शीघ्र कवल; दे मेट ब्रिटिश की चहल-पहल ,
मत देख दाहिने बाएँ। आ पगले ! गदर मचाएँ।
उड़ रहा जमाना नव उड़ान , क्षण-क्षण पर गाता नए गान;
ओ जले-कटे मनचले जवान ! अब है सम्मुख रण विद्यमान;
अन्धड़ , पतझड़ , बौझड़ , उफान , यह भी पाते हैं भाग्यवान;
वहकर , सहकर , ठोकर खाकर , हम क्यों न भाग्य अजमाएं ?
आ पगले ! गदर मचाएँ।
कितने स्वदेश के वीरव्रती , पशुओं जैसे काटे जाते;
कौड़ी के विकते तीन-तीन , कहकर गुलाम डांटे जाते;
अबला नंगी लुट रही, गए तोपों से बच्चे उड़वाये ,
जिसने खाए कच्चे हम क्यों न उसे खा जाएँ।
आ पगले ! गदर मचाएँ।
सेना हो तो सेना संग लें ,
एकाकी हो तो अकिले चल दें; ज्यादा विचार करते कायर ,
परिणाम सोचते हैं बुद्धू; लड़ना वीरों का पेशा है ,
मरना गुलाम की परिभाषा; जग उलट रहा है क्यों न स्वयं
हम ही निमित्त बन जाएँ ? आ पगले ! गदर मचाएँ।
जिसने लूटा, उसको लूटें, जिसने डांटा उसको डांटें;
इसको कहता अन्याय कौन? जिसने काटा उसको काटें;
हम शक्तिवान हो क्यों न लड़ें? क्यों सहन करें, क्यों रहें मौन?
हम क्यों चुकें मौका पाकर दुश्मन को घर बैठाएँ।
आ पगले! गदर मचाएँ।
जितनी ही होती देर अधिक,
उतना ही बढ़ता दर्द अधिक, मरने के दिन गिन रहे बधिक,
बढ़ना-बढ़ना कह रहे पथिक, मत सोच हाथ में शक्ति नहीं,
कलयुग में केवल संघ शक्ति; उठ चल हँस-हँस बलिवेदी पर
देखो वे तुझे बुलाएँ।
आ पगले ! गदर मचाएँ।

ओ शासक नेहरू सावधान !

ओ शासक नेहरू ! सावधान, पलटो नौकरशाही विधान ,
अन्यथा पलट देगा तुमको मजदूर वीरयोद्धा किसान.
जिसने तुमको सम्मान दिया जिसने तुमको पद दान दिया;
अपनी गर्दन पर छुरी चलाने का अधिकार प्रदान किया.
तुम बेशक कर्मठ धीर वीर मोती के लाल जवाहर हो,
वाणी से क्रांति मचाने वाले तुम्ही एक नर-नाहर हो.
जगती ने तुम्हें प्रणाम किया भारत ने भारत दान दिया;
भूखे - प्यासे - कंगालों ने जीवन-धन ईमान दिया.
जिस ओर तुम्हारे चरण बहे, उस ओर बहा ुग का बहाव;
जिस ओर तुम्हारी दृष्टि चली उस ओर चला प्रभु का प्रभाव.
जिस समय तुम्हारी वाणी ने जो श्रमिक-विभुक्षित से माँगा,
उस समय वही सौगातें दीं , प्राणों को शूली पर टांगा.
नवयुवक तुम्हारा नाम पकड़ जेलों में हँस-हँस जाते थे
बालक बूढ़े अधखिले-सुमन जीवन-संसार लुटाते थे.
अपराधी होकर जेलों में जाना किसने न पसंद किया;
उसने सुन वाणी, बिना हिचक जेलों में निज बलिदान दिया.
भोली ललनाएँ बिना खता डंडे पुलीस के खाती थीं;
भारत की आजादी के हित बच्चों की भेंट चढ़ाती थीं.
वह क्रांतिकारियों की ताकत, श्री हरदयाल का गदर-पत्र;
श्री बोस-घोस पिंगलेदत्त जो फाँसी पर पढ़ गए मन्त्र;
राजा महेंद्र , श्री सावरकर, योगेश , मुस्तफा , भारद्वाज,
सरहद्द वीर अब्दुल गफार, गाँधी का रण विजयी समाज,
जलियान बाग, शोलापुर, बंग, नौवाखाली , पटुआ खाली;
बम्वई , पेशावर, घरसाना घटनाएँ भीखमपुर वाली.
ये नहीं भुलाई जा सकती, परतंत्र देश की कुर्बानी,
औ नहीं मिटाई जा सकती बंटवारे वाली नादानी
अल्हड़ स्वदेश की नव उड़ान, अंग्रेज राज्य की कूटनीति,
तुमने ही दे दे तरह जिना की खड़ी कर दिया लीग-भीति.
बदनाम हुए शौकत-जिन्ना पर तुमने लीग बढ़ाई थी;
कांग्रेस-कमान की बिना राय तुमने जनता बंटवाई थी.
गाँधी-सुभाष ने मना किया, पर तुमने कुछ परवाह न की;
सारा भारत तिलमिला उठा पर तुमने रंचक आह न की.
तुमने लन्दन की छोकरियों में, जाकर दावत खाई थी;
पीकर मादक बँटवारे पर एक तिरछी कलम चलाई थी.
उसको भी सबने क्षमा किया, तुमको ही अग्रज मान लिया;
बूढ़े बच्चों नवयुवकों ने कह चाचा तुम्हें प्रणाम किया.
लाखों स्वदेश की ललनाएँ पाकिस्तान को दिया दान;
घर छिना, इज्जतें लूटीं, भगे उजड़े पर रंच न किया ध्यान.
दुःख है जब हिन्दू लुटते थे, तब खुली छूट दे देते थे;

पर जब मुस्लिम लूटे जाते तब गोली चलवा देते थे. ब्रह्मा के , लंका , गोवा के हिस्सों को तुमने छिनवाया; नेपाल, भोट, तिब्बत, सिक्किम मिलते पर तुमने ठुकराया. यह न विचारा तीतर तो, हरदम पिंजरे में रहते हैं. बुलबुल चकोर मैना बटेर ये सदा गुलामी चहते हैं. बोलो भारत के कर्णधार अब क्या करवाना चाह रहे; चीनी कम्युनिस्टों से क्या अब भारत भुंजवाना चाह रहे. भारत लड़ने को अग्रशील पर तुम ले बैठे पंचशील; चीनी कायर से छिनवा दी धरती चालीस हजार मील. सूची के अग्र बराबर भी धरती न दान में दी छिन में; अट्ठारह अक्षौहिणी सेना कटवा दी अट्ठारह दिन में. तुम उस भारत के शासक बन भारत की नाक कटाते हो; यह क्या कायर सी आदत है लड़ने से दम दुबकाते हो. क्या भूल सकेगा कभी विश्व भारत महान की बहादुरी; लड़ने, मरने, श्रम करने में है कौन कर सका बराबरी. जाओ उतरो दिल्ली छोड़ो , आनंद भवन में करो नृत्य; क्यों भारत देश उजाड़ रहे करके अनीति करके कु त्य. संग्राम बहादुर करते हैं , गुंजार बहादुर करते हैं; हुंकार बहादुर करते हैं , संहार बहादुर करते हैं. मजदूर झड़प कर कहता है , पिकार तड़पकर कहता है; बालक बच्चा बूढ़ा जवान हर तड़प-झड़प कर कहता है पंडित नेहरू गद्दी छोड़ो , बाबू नेहरू गद्दी छोड़ो; चाचा नेहरू गद्दी छोड़ो , शासक नेहरू गद्दी छोड़ो.

पलटिए बार-बार सरकार

पलटिए बार-बार सरकार. संभव है उल्टा-पलटी में मिले योग्य सरदार .यदि शासक सुयोग्य सुन्दर है , राम राज्य से भी बढ़कर है, फिर भी उसे पलटते चलिए, युग अपनाता नई लहर है, पलटा करते हैं जनता के क्षण-क्षण हृदयोद्गार. पलटिए बार-बार सरकार . क्षण-क्षण उलट-पलट करने से, जनता के सचेत रहने से; शासक अंध न्याय भी करता, प्रबल विरोधी दल बनने से, जो न विरोधी हों, तो शासक करता अत्याचार . पलटिए बार-बार सरकार. आज जमाना छत्रहीन है , शासक जनता के अधीन है; फिर भी कुर्सी पर अधिकारी, होता अंध प्रमत्त क्षीण है भूल भविष्य स्वार्थ हित करता भीषण नर संहार . पलटिए बार-बार सरकार . शासन का आदी जहान था, भारत में राजा प्रधान था; आज जगत में प्रजातंत्र है, जिसकाुग को नहीं ज्ञान था; हर दम हंटर ले शासन के सर पर रहो सवार . पलटिए बार-बार सरकार. नीर स्वच्छ बहता पलटे से , खेत अन्न देता पलटे से, रूसा भी बेला बन जाता , तीन बार उलटे -पलटे से, उलटा-पलटी का मानव को प्रकृति सिद्ध अधिकार. पलटिए बार-बार सरकार . माना कल यह ही दिन होगा, यही उदय ,यह रवि-शशि होगा, यही कार्य जीवन-गृह बंधन, यह मानव;ह जगमग होगा, पर कल पर ही आधारित है, प्रगतिशील संसार . पलटिए बार-बार सरकार. कृषक अन्न का उत्पादक है, श्रमिक वस्तु का निर्माणक है, शेष मुफ्तखोरों का दल जो लूट हेतु बनता शासक है, यह भव-भार उठाकर फेंको महानाश के द्वार. पलटिए बार-बार सरकार . सदियों चलायवन का शासन, वर्षों जमा ब्रिटिश सिंहासन; बारह वर्षों से भारत में जमा हुआ लिडरों का आसनय यदि पलटोगे नहीं ,यही कर देंगे बंटाधार . पलटिए बार-बार सरकार . रिश्वत, घूस , फूट के चकमे; दिखा रहे जनता को वश में; कपट, द्रोह,भय, भेद सिखाते, स्वार्थ हेतु पार्टी के भ्रम में, यह जीवन कलंक जगती का सदा रहो हुशियार पलटिए बार-बार सरकार .

यक किसान की रोटी

यक किसान की रोटी, जेहिमाँ परिगइ तुक्का बोटी
भैया!लागे हैं हजाराउँ ठगहार।
हँइ सामराज्य स्वान से देखउ बैठे घींचं दबाये हइँ
पूँजीवाद बिलार पेट पर पंजा खूब जमाये हइँ।
गीध बनें हइँ दुकन्दार सब डार ते घात लगाये हइँ
मारि झपट्टा मुफतखोर सब चौगिरदा घतियाये हइँ।
सभापती कहइँ हमका देउ, हम तुमका खेतु देवाय देईं
पटवारी कहइँ हमका देउ, हम तुम्हरेहे नाव चढाय देईं।
पेसकार कहइँ हमका देउ, हम हाकिम का समुझाय देईं
हाकिम कहइँ हमइँ देउ, तउ हम सच्चा न्याव चुकाय देईं।
कहइँ गोहर्रिर हमका देउ, हम पूरी मिसिल जँचाय देईं
चपरासी कहइँ हमका देउ, खूँटा अउ नाँद गडवाय देईं।

कहइँ दरोगा हमका देउ, हम सवरी दफा हटाय देईं
कहइँ वकील हमका देउ, तउ हम लडिकै तुम्हइ जिताय देईं।
पंडा कहइँ हमइँ देउ, तउ देउता ते भेंट कराय देईं
कहइँ ज्योतिकी हमका देउ, तउ गिरह सांति करवाय देईं।
बैद! कहइँ तुम हमका देउ, तउ सिगरे रोग भगाय देईं
डाक्टर कहइँ हमइँ देउ, तउ हम असली सुई लगाय देईं।
कहइँ दलाल हमइँ देउ, हम तउ सब बिधि तुम्हँइ बचइवै,
हमरे साढू के साढू जिलेदार।
यक किसान की रोटी,जेहिमाँ परिगइ तुक्का बोटी
भैया!लागे हैं हजारउँ ठगहार

हमका चूसि रही मंहगाई

रुपया रोजु मजूरी पाई, क्षानी पाँच जियाई,
पाँच सेर का खरचु ठौर पर, सेर भरे माँ खाई।
सरकारी कंट्रोलित गल्ला हम ना ढूँढे पाई,
छा दुपहरी खरावु करी तव कहूँ किलो भर पाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
जिनकी करी नउकरी उनते नाजउ मोल न पाई,
खीसइ बावति फिरी गाँव माँ हारि बजारइ जाई।
लोनु तेलु कपड़न की दुरगति दारि न देखइ पाई
लरिका घूमइं बांधि लंगोटा जाडु रहा डिड़ियाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
खेती वाले गल्ला धरि धरि रहे मुनाफा खाई,
हमरे लरिका भूखे तरसइं उइ देखइं अठिलाई।
खेती छीने फारम वाले ट्रेक्टर रहे चलाई,
गन्ना गोहूँ बेंचि बेंचि के बैंकइ रहे भराई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
सबते ज़्यादा अफसर डाहइं औ डाहइं लिडराई,
पार्टी वंदा अउरउ डाहइं जेलि देइं पहुंचाई।
बड़ी हउस ते ओटइ दइ दइ राजि पलटि मिलि जाई
अब खपड़ी पर बइठि कांग्रेस हड्डी रही चवाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
ओट देइ के समय पारटी लालच देंय बिछाई
वादि ओट के अइसा काटइं, जस लौकी चउराई।
खेती वालन का सरकारउ कर्जु देइ अधिकाई
हमइं कहूँ ते मिलइ न कर्जा हाय हाय हउहाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।

बढ़िया भुइँ माँ जंगल रोपइं ताल झील अपनाई
गाँव की परती दिहिसि हुकूमत दस फीसदी छोड़ाई।
देखि न परइ भुम्मि अलबेली खेती करइ न पाई
ऊसर बंजर जोता चाही चट्ट लेइं छिनवाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।

जो कछु हमरी सुनइ हुकूमत तौ हम विनय सुनाई
सबकी खेती नीकि हमइं जंगलइ देत जुतवाई।
चउगिरदा सब राहइं रूँधी, भागि कहाँ का जाई
कइसे प्राण बचइं बिन खाए खाना कहाँ ते लाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
सुनित रहइ जिमिदार न रहिहइं तब जमीन मिलि जाई
अब उनके दादा बनि बइठे सभापती दुखदाई।
खुद सब जोतइं धरती बेंचइं महल रहे उठवाई
हम भुइंहीन सदा से, खेती हमइ न कोउ दइ पाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
हमते कहइं की की भुइं पर कब्जा लेहु जमाई
फिरी थोरे दिन माँ पटवारी अधिवासी लिखि जाई।
जिनकी भुइं नीके कस छोड़िहइं कवजा जउ करि पाई
उनके लरिका हमका कोसिहइं हम बेइमान कहाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
हम होई बीमार डरन माँ अस्पताल ना जाई
हुंवउ लगि रही संतति निग्रह इंद्री लेइ कटाई।
सुवरी कसि छावरि अफसर की बंसु बढ़इ अधिकाई
हमरे तीनि जनेन का देखे उनकी फटइं बेवाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
नफाखोर मेढुका अस फूलइं हमरा सबु डकराई
थानेदार जवानी देखे पिस्टल देंइ धराई।
जो जेत्ता मेहनती वहे के घर वत्ती कंगलाई
जो जेत्ता बेइमान वत्तिहे तोंदन पर चिकनाई।
हमका चूसि रही मंहगाई।
पार्टीबिंदी न्याय नीति अउ राजनीति ठगहाई
कोऊ नहीं सुनइ कोऊ की मउत रही डिड़ियाई।
हे ईसुर यहु सिस्टम बदलउ देउ सयान बनाई
चाटि जाउ सरकारु आजु की या चाटउ लिडराई।
हमका चूसि रही मंहगाई।

किसान की दुनिया

फूस पताई के कुछ छप्पर , माटी क्यार घरउंदा ,
पिछवारे लहराय तिपतिया बीच-बीच कुकरउंधा।
दहिनी वर महँतउ की बखरी , जिनके बड़े जवाना ,
बाँई वर मइकिनिया धोबिन जेहिके घर ना दाना।
लगी दुवारे घनी पकरिया बिगहन छाँही फइलइ ,
चिमगोदरा घुघुआ , बिसखपरा वहि पर बसइं चूरइलइं।
गाँव भरे माँ एकुइ बढ़ई ना लोहार ना धुनिया ,
दसइ पाँच घर जप्पे-थप्पे यह किसान की दुनिया।
सबिता उवइं, जोंधइया अथवइं चलइ मन्द पुरवइया ,
कोइली कों-कों , कुतुआ पों-पों , चों-चों करइं चिरइया।
बर्ध दुवउ पागुरि माँ लागे , गाय पल्हानि हुँकारइ ,
टटिया फारे बछरा झाँकइ , रहि-रहि मूड़ निकारइ।
टेंटे पर लरिका का दाबे मेहरी द्वारू बहारइ ,
बड़का भईया गेंदु बनावे सूखे ब्याल उछारइ।
बिटिया थिरकइं पाँवन पहिरे सनई की झुनझुनिया ,
देखि करेजा बित्तन बाढ़इ यह किसान की दुनिया।
गोरुन का चारा पहुँचावइ , लरिकन का फुसलावइ ,
सगरे घर का कामु चलावइ पति का अदबु बजावइ।
चकिया पीसइ, धानु कुटावइ , कंडा उपरी पाथइ ,
टोला का दुइ चारि जनी मिलि बाहर निकरइ साथइ।
कपड़ा फींचइ, बरतन माँजइ , घर की करइ सफाई ,
रोटी करइ खवावइ सबका , अंजनु बनी लुगाई।
हँसइ न बोलइ , कुछु न जानइ , पूत खेलावइ कनिया ,
कामु करइ का रचिस विधाता यह किसान की दुनिया।
बड़े सबेरे से हरु नांधइ, जोतइं , बोवइं , मयावइं ,
फिरि खारा खुरुपा हंसिया लइ चारा घासइ धावइं।
दुपहरिया माँ चारि पनेथी बड़की लोटिया पानी ,
कबऊँ चबेना , मट्ठा , सरबत अइसेइ गइ जिंदगानी।
पेड़ा, गट्टा, मेले ठेले, बेढ़ई, बरा, फुलौरी,
तिथि परबी अउ भये बियाहे पूरी, पुआ, कचौरी।
चना, मिठाई , बहुरी, भुरुकी, तिलचउरी गुड़धनिया ,
सबइ ऋतुन का यहै कलेवा यह किसान की दुनिया।
पीर , फकीर, अघोरी , नागा , छलिया , ठग , अधतुरके,
नंदीसुर , हरजलिया , कुंजड़ा , नंगा दुनिया भर के।
जोगी जागा नट , बइरागी , नाउत , बइद , गोसाईं ,
भट, बेड़िया, राधा , ब्रजवासी , पीर , महाउत , सांई।
नई फसिलि की राह निहारइ छट्ठे महीना आवइं ,
भांति-भांति के बाना रचि-रचि माँगि-माँगि लइ जावइं।
बांसु बजावइं ,बिर्ति लेंय गंगापुत्री खुनखुनिया ,
लुटइ लुटावइ हँसी-खुशी ते यह किसान की दुनिया।
जमींदार कुतुआ अस नोचें देह की बोटी-बोटी ,
नौकर , प्यादा अउ कारिन्दा ताके रहइं लंगोटी।
पटवारी खुरचाल चलावैं ,बेदखली इस्तीफा ,
रोजुइ कुड़की औ जुर्माना छिन छिन नवा लतीफा।
थाना-चउकी , पुलिस , कचेहरी , इसपट्टर अउ पासी ,
सब अपनी ससुरारि बनाये अफसर अउ चपरासी।
चाटि जांय सब जिनिस खानगी, लोनु, तेल, गुड़धनिया ,
लाली पगड़ी देखे लरजइ यह किसान की दुनिया।
सबइ किस्तिहा , महाजनन की घर-घर बोलइ तूती ,
गाँसि घेरि के करजा बाँटइं , फिरि फटकारइं जूती।
रोजही अउ नउदसी उगाही , पुरुनोट अउ रुक्का ,
दस्तक भेंट बेगारि उचापति , रोजुइ थुक्कम-थुक्का।
धन्ना दइ मोहरे माँ बइठइ , उल्टा डारइं खटिया ,
लटे-लिहाड़े करइं इरादा , ताकइं बहिनी-बिटिया।
बने सिपाही लाठी बांधे बउना अउ ठनगनिया ,
उनका देखि छिपइ कोने माँ , यह किसान की दुनिया।
मोटे-झोटे कपड़ा बरतन, मोटा झोटा खाना ,
घर ते खेतु ख्यात ते बग्गरू कहूं न आना-जाना।
ठग्गा-नंगा इज्जति पावै कीमियागर पुजवावइं ,
फेरी करइं बिसाती , पटवा मेहरिन का पलझावइं।
सरा-गला मनमाने दामन सउदा गरे लगावइं ,
मनिहारी लइ चुरिया-कंगन दुई के चारि बनावइं।
बीच हाट माँ डांड़ी मारइं उइ घटितोला बनिया ,
जहां जाइ तहँ ठगि के आवइं यह किसान की दुनिया।
जूड़ी, हइजा, ताप, तिजारी, हाथन पाँव बेंवाई,
दादु-खाजु, जिन्दन की फेरी, पगियन की परछाई।
मान-मनउती, डांडे घूरे, चढ़इ साल माँ छइया,
बकरा बीर, पीर का मुरुगा, चिलम लेइ डड़वइया।
लरिकन का सुख-निंदिया चूसिसि अउ धानन का गंधी,
बिरवा, पथरा , मुरदा पूजइ , दुनिया अऊँधी अंधी।
त्रिफला, त्रिकुटा, संउफ, कासनी, लाल लोनु, अमलोनिया,
यहइ दवा अउ बइदु गोंसाईं यह किसान की दुनिया।

राजा की कोठी

ऊँची-नीची रंग-बिरंगी लगी सरग माँ चोटी ,
बड़ी दूरि ते चमकि रही है वह राजा की कोठी।
चउगिरदा थनिहन की पल्टनि , पनिहा सोती खावाँ ,
केरा लगे , पपीता लटकैं , ईट लखउरी झावाँ।
मेंहदी कटि-कटि राह बनावइं , बिरवा चँवर डोलावइं ,
फूल बइठि पछिताइं गलिन माँ , बरवस महक लोटावाइं।
पंछी कइदी , पउधा कइदी , देखतइ काँपइ बोटी ,
कइदि किहे जियरा किसान का यह राजा की कोठी।
जहाँ माँस चुरि रहे पसुन के , खाल बिछी बघवन की ,
घोड़वा हीसइं , हाथी चिंघरइं , सकल टँगी देउतन की।
राम- ष्ण के मूड़ टंगे , संकर लटके साँपन माँ ,
पुरिखा जड़े परे सीसन माँ, रूप भरे कमरन माँ।
बिजुरी जरइ, तारु मुहँ ब्वालइ, पानी उगलइ टोंटी ,
जियइ गाँव का चूसि-चूसि के यह राजा की कोठी।
झाँझरि खिरिकी, खची नखासी, कलई पुती देवालइं,
झब्वा झूलइं, पँखा हालइं, घंटा-पहरू ब्वालइं।
चढ़ी तोप सुधियाइ दुनाली , चहुँदिसि ठढ़े सिपाही ,
कार सजीली , नारि कँटीली , बरसइ सुरा सुराही।
मनमाने सासन के बल पर फूली लूट-खसोटी ,
आजु जबाना देखे लरजइ यह राजा की कोठी।
ईट किसानन के हाड़न की , लगा खून का गारा ,
पत्थर अस जियरा मजूर का , चमक आँखि का तारा।
लगी देस भगतन की चरबी , चिकनाई जुलमन की ,
घंटा ठनकइ अन्यायन का कथा होइ पापन की।
जहाँ बसइ उ जम का भइया , खाय खून को रोटी ,
हुंवइ बनी बूचड़खाना असि यह राजा की कोठी।
दफतरू बना रजिट्टर गांजे , लिखइं सफेद कसाई ,
काटइं प्याट किसान देव के लूटइं लाज कमाई।
पूजा होइ अफसरन की चलि रही छुरी सुधुवन पर ,
बनइ लूटि का जालु राति-दिनि , नाँउ चलइ तिगड़म पर।
जहाँ सतीत्व लुटइ अबलन का ,छीनी जाय लँगोटी ,
हुंवइ बनी बइतरनी तट पर महराजा की कोठी।

राम मड़इया

नदी किनारे सड़क न गल्ली , द्वारे भरी तलइया ,
हुंवइ बनी निबियन के भीतर अपनी राम मड़इया।
जहाँ बयारि लगावइ झारू , जुगनू दिया देखावइं ,
सुवर-सियार , गीध चिल्हारियाँ कूरा सइंति उठावइं।
चिरई कउवा 'का-का' कहि-कहि जागि जगाय सोवावइं,
उइ उइ अथइ-अथइ के सिविता दिनु अउ राति बतावइं।
जहाँ बंदरवा डाका डारइं, चोरी करइं बिलइया ,
हुंवइ बनी हइ है राम सहारे अपनी राम मड़इया।
जहाँ जाडु मुट्ठिन माँ बांधा बरफ जमी छपरन पर ,
राति दउसु बीतइ पयार माँ मउत टँगी खुंटियन पर।
दसउ दिसा गुर्रायं राति-दिनु जेठ दुपहरे झऊँकइ ,
सुर्ज चूसि के धरती भिजवइं धूरि उड़इ , नभ छऊँकइ।
सावन रोवइ , चइतु हँसावइ , बीतइ छप्पक छइया ,
हुंवइ घास माँ बनी फूस की अपनी राम मड़इया।
जहँ गाइन का घंटा ठनकइ भंइसिन क्यार हुँकारा ,
घोड़वा हींसइ , बघवा डहुँकइ , गदहा देंय नगारा।
कुतुआ, उल्लू बने पहरुआ निहुँकि-निहुँकि जगावइं ,
पीपर बरम , नीव पर नंगुला , जिन्द परेत पुजावइं।
जहाँ बजइ रइदास की ढपली , नाचइ कुँवर कन्हइया ,
हुंवइ वनी बन के कुंजन माँ अपनी राम मड़इया।
कहूँ-कहूँ बाँसन का झुरमुट नागफनी चउधारा ,
मूँजा , बेलझर , काँट-करौंदा रूँधि रहे गलियारा।
जहाँ बसन्तु चुवावइ महुआ जेठ तपे जल बरसइ ,
सरद कमल, हेवन्तु गेंदन पर,सिसिर कुसुम पर बिलसइ।
जलचर बनचर करइं किल्वालइं नाचइं सुवा चिरइया ,
हुंवइ बनी सूनी दुनिया माँ अपनी राम मड़इया।
नेउरा बीछी बर्र डिंगारे साँप कहइं घरु अपना ,
मुसवा सुडुग , सेंध रचि चेंटा सम्पति चहइं हड़पना।
राजा व्यवहर निगलइं उगलइं नदी हिल्वारा मारइ ,
सूखा आगी पानी पाथर, छिन-छिन प्रान निकारइ।
कोई दवा न दुआ देवइया , घर-घर हापा दइया ,
हुंवइ बनी आफत की मारी अपनी राम मड़इया।
बैल चढ़े शिव-शंकर घूमइं डाड़े पर डड़वहिया ,
धरती पहिले खूनु पियइ, फिरि अन्न देइ बन गइया।
जहाँ तीरु अस पानी लागइ, बोली विष की बोली ,
सिगरे रोग पुजावइं , जहँ पर , जलइ जुल्म की होली।
जहँ से अन्नु बंटइ दुनिया का चलइ धूरि माँ नइया ,
हुंवइ बनी दुनिया की चूसी अपनी राम मड़इया।
करिया अच्छरू भंइसि बराबर , उजल मूडु भगवान ,
बिकट अंधेरु , स्वार्थ का गाना , बइरिन का सनमान।
जहाँ नहीं ब्यापी अंग्रेजी , जमि न सकी सुल्तानी ,
नई सभ्यता डरि-डरि भागी , घर-घर रीति पुरानी।
जहाँ किसान जगत के पालक , बसइं बया के भइया ,
हुंवइ बसी हइ बिना बसाये अपनी राम मड़इया।

वंशीधर शुक्ल की अवधी कहानी :

बेदखली

सबेरे क्यार पहरु है , चिरैया चुचुवाय रही , कौवा कुकुवाय रहे , महोख कुटुपीस लगाये , घास आँसू बहाये , अंधेरु भाजु भाजु मचाये, उजेरु आव-आव लगाये , पंडित ब्रम्ह्म मुहूरत मनाये , चन्दन की खौरि लगाये , मुर्गा बांग सुनाये , किसान बर्ध मचियाये हरु काँधे पर ध रे , कुदारी लटकाये, पैना तमतमाये अपने खेत की वार नौ-बा करत जाय रहे हैं . राह माँ तमाम खत्ती-खत्ता, चहला कीचड़, मैला कुचैला, काँटा खोभरू उरुवी गाँड़र परति है , मुला अपनी धुनि माँ मस्त किसनऊ नाहीं कोहू की परवाहि करति हैं, चुप्पे अपने खेत माँ पहुँचति हैं।

चौमासे झरुआ के खवैया बर्ध डोरी छुए कोड़ाति , माछी लागे बिलबिलाति , उछरति , पुडुकाति चलति हैं , मुला चारि घरी मुहँ अँधेरे के उठे किसनउ देहीं कसर-कसर , हड्डी चरर-मरर , खपड़ी भाँय-भाँय, करेजा सांय-सांय करति हेंउ हेंउ कहिकै बरधन पर हरु नहिके ऊँचा खाली कठलेवा खेत माँ अंगस-बंगस कूँड़ खचाय के सूध हराई भरि के खेतु जोतवु सुरू करति है। जब कुछ थोरा चलिकै बर्ध राह पर आय जात हैं तब सूध कूड़ विना हाँके चलै लागति हैं , कुछु सिविता आंखि तरेरति , घास के आँसू पोछति , फूलन की पंखुरी झारति , हजारन किरवन का मारत जियावत वहे अपनी पुरानी लकीर पर चलै लागति है , बदरिया राई लोन अस उतारि-उतारि भाजै लागति है। किसनऊ देखि-देखि कइ बहुतइ खुसी होति हैं। अपने मनहें मन अपनी भागि का सराहति भये कहै लागति हैं ई अतने बड़े अग्गासी गोला से हमहें अच्छे। उनके वहै अग्गासी खेत वहै एक लकीर एकहे कूड़ पर रोज एक्का अस घोड़ा कोड़ाति चले जाति हैं। हियाँ लपसठि बिगहा खेत , हजारन गल्ली हजारन कूड़। चाहे जैसी चली चाहे जैसी घूमी। हम लरकई तें देखति चले आइत है कि सूर्य कबहूँ सूध उत्तर दक्खिन चलिय नाही सके है औ हियाँ का ? अबै पूरव पछांह जोतिति है अबहें उत्तर दक्खिन ख्वै जाई तो कोई कहवैया पुछैया नहीं है। सिविता जब कवहूँ सांझ का समुन्दर माँ पहुँचति है तब पानी पावति है , मुला हियाँ सैकरन तलिया पुखरिया गल्ली-गल्ली , रंग-बिरंगे फूल खिलाये , बयारि लागे हहराय रही हैं। सिविता चाहे जत्ता तपावै मुला चार-छह आंगुर पानी ऊपर-ऊपर भले गरमाय पावै भीतर बिचारे तलिया ताल हमरी बदि हेवारु अस पानी जोगये राखति हैं।खायके आम की गुठली औ फांकि के लहिला लोन औ पी के लोटा भर माठा औ सरवत जब कुछ पियास मालुम होति है तो चुप्पे ताल के किनारे पहुंचेन औ घुसि गयेन गांठिन लौं पानी माँ औ कसिके हिलकोरेन औ डाह निकारेन। भीतर ते बढ़िया ठंडा पानी औ डाह बुताय के पी लिहा, बसि अखम।

ई सहरुल्ला अपनी चाय चाट पर बहुत सिहाति हैं , मुला जो कहूँ परि जाति हैं हमरे गाँवन की गल्ली मा , भूड़ के रप्पा मा , जो कहूँ भवा जेठ का महीना तो पझकि जाति हैं , रबड़ कसि गेंदु। फिरि सुमिरि आवति है छठि के देउता , टका लै-लै उठति हैं। पग-पग भुंई भारु होय जाति है।कुसबंधिनी लै हँसती हैं। भैया टैयाँ-टैयाँ चले आओ , पंछी पग धीरें। ई सुनति हैं का करैं। जेहिके पचास बिगहा खेत, दुइ फुलहा टांडा बैल, दुवारे मंदराजी भैंस बंधी जंजीर खड़खड़ाय रही होय, वहि के बराबरि का एक लाटि कलट्टर, का राजा, का थानेदार ? सब हर के तरा। ई जेत्ते दोसरेन का पैदा किहा खाति हैं , इनका एक तना केर मिरसिकारै कहै का चही। अदिमी का जो दोसरे की कमाई खाय , वहिते मेहरुआ नीकी। जौन खेती नाहीं करति है , तौन नीकि नाजु नाहीं खाई का पावति। लाये पसेरी भरि चाउर औ खाइन साँझ का , रहिगे तौन खुंटिया पर बाँधि ा के अंगौछा माँ टाँगि दिहिनि। सब कहति हैं सहरुल्ला बाबू थोरा खाति हैं। अरे , जादा पावैं कहाँ। मोल का नाजु खाति-खाति आँतें सिकुरि जाती हैं , फिर भूख अपनै कम होय जाति है। एत्ते बड़े-बड़े महल देखि डारौ , दुवारे कहूँ दुइ पूँछियु नाही बाँधी। गाय के नाते याक बकरिउ नाहीं पाली। ऊँचे से ऊँचे कोठा-बरोठा बने हैं , मुला नाज का दाना नाहीं। का ऐसे कोठा देखिके होय। सहरुल्ला दूध देखौ , जैसे चौरहनी का पानी। तीनौ गहनिन की जूठी मलैया माँ , जेहिमा उइ कबहूँ भातौ रींधि लेती हैं , वहे माँ दुहिनि दूध औ यहु को नाही जानति कि ई कोई झाड़े का लोटा नाही माँजति। वहे झड़ेहे लोटा भरि पानी औ डेढ़ लोटा दूध लैके सहर माँ कोछेंन माँ चबेना भसकति गईं औ बेचि आईं। हुंवा बाबू जी खौहान बैठे हैं। जहाँ गहिनिया

हाँकि दिहिसि , लेउ दूध , बसि जीभ टेंय के उठे औ खरीदि लिहिनि , बस होयगे जन्टलमैन।

हियाँ साँझ सबेरे दुहित है मेरुवन दूध। 'घर्र-घों' घर्र-घों' सुनिकै देवतन क्यार मन डोलै लागति है। जब देखौ तव जिलेदार केर चपरासी अपन अस मुहँ लिहे दांत निपोरे ठाढ़े हैं। दूध देउ , ईद है , जिलेदार के सेमैयाँ पकिहैं। चाहे जेत्ते खक्खासाह होंय , मुला माँगै तो हमरेइ दुवारे आवति हैं। उनके आय जायँ चारि पहुना तौ वहे छटाँक भरि दूध माँ डारिके सेरु भरि पानी औ गरम कैंके चटाय दिहिनि औ बरतन एत्ते धरि दिहिनि जो याक जने के ढोवै भरे का उनकी खातिर होयगै। हियाँ उइ बरतनै देखिके जिउ ऊबि गवा।

औ हमरे हियाँ जो कहूँ आय जायँ दस पहुना तौ को सरबतु घोरै कि खाँखड़ि करै , चट्ट उठाय लायें दही की दहेंड़िया औ डारिकै चकोटन राब औ भरि-भरि फूले के पचहड़िया बेलवा , जेहि के आगे धरि दिहा तौनौ जानिसि कोई लंगोटहा के दुवारे गए रहन। बारह घंटा लै का अखम। भूखौ हाथ जोरे ठाढि रहति है।

यहे कल्पना की खुसी माँ हर के पीछे घूमि-घूमि किसनउ गावै लागति है आल्हा -

"बाप का बैरी , सुख माँ सौवे, वहिके जीवन का धिक्कार।
काहे न मारे मरै खेत माँ, काहे नाँव रहा लजवाय।
जैसे पान माँ चूना लागै , लागति खैर बम्ब होय जाय।
ऐसेइ बात लगै मरदन के रन माँ मरे बात पर जाय।
मेहरी मरे फेरि मिलि जैहैं , लरिका छुटे फेरि मिलि जाय।
माय बाप ना मिलै दुबारा , औ ना मिले कोख का भाय।
ताल बिगारयौ है काई ने यारौ चुगुल बिगारै गाँव।
मेहरी बिगरे डेहरी बिगरै , बूड़ै सात साखि का नाँव।"

यहे धुनि माँ मस्त किसनऊ गाय रहे हैं , एतने माँ आयगा रियासत का बिसरिहा चौकीदार औ कहिसि -'ओरे सम्भरा , चलु तुइका चपरासी साहब बोलावति हैं। किसान "काहे चपरासी साहब का करिहैं, का कुछ उनका पोत पाई चहित।" चौकीदार- "अरे कुछ काम होई। का सब पोतै पाई का काम होति है। " किसान" औरु हमसे का काम , दूध मगैया होइहैं। तौन आज मंगरू है, देइब नाहीं। बेगारि हम दै चुकेन है। अब कोई दोसर का ढूढें , का हमहे गाँव माँ छंटे हन।" चौकीदार" अरे चलत है कि मारु खैहै , हम तोरे दादा के नौकर हन जो तुइका हियाँ खेत माँ ढूंढे आयेन है , चलु। "किसान" तौ हालु बतावौ, का हमरा अचार धरिहैं चपरासी साहब , हमरे खेत की ताक जाति है। हम बिनु जोते छाड़िब नाहीं , चाहे राति होय जाय। हमका जादा हैरान न करौ। जैवा-ऐवा हम कहूँ नाहीं।" चौकीदार" तौ हम तुइसे साँचु पूछित। का नाहीं जैहे, हमरेइ हाथ निसैधे करवैया है , जिलेदार अन्ते रहिहैं, पहिले हमहे मारि लाठिन अबहें पढ़िन मछरी अस कमठारि डारिब। वस ठीक होय जैहौ। चलति है कि नाहीं , बोलु। "किसान" देखौ हम तुमते ब्यार-ब्यार कहित है , हमरी खोपड़ी पर भदैयाँ मेढ़का अस टरटराव ना , नाई अबहें लै लेहौ कुछ। तुम नीके जानति हौ , हर पर हरवाहु सिकार पर सेर बराबरि होति है। परी अबहें कांधासूती यहु वरध हंकना चभुका , तौ यादि आई छट्ठी का धान! हटो समुहे से , हमैं जोतै देउ। आज ई बिटोनियऊँ पानी नाहीं लाई हैं। इनकी थोरी इलाज है , चलि लेई घर लै , बसि तवहें बतइवा इन्हैं नौरे दहिनवाँ , बा बऊँवा।"

चौकीदार "अच्छा अब हम बूढ़ेन का हैरान किहे हौ, तौ बैठेउ सुख से, तब बतइबा।" कहिकेर जिलेदार के पास चला जाति है औरु जड़ि देति है" हुजूर ! वहु हमरे का , हमरे दादौ के बोलाये नाहीं आवै का। वहिका अस घमंड है , आसों चारि-पाँच सौ की ऊख का होयगै , वहु भुई-भुईं नाहीं चलति। हम तौ बूढ़ मनई अपन बखत काटि के चले आयेन। जो कहूँ और कोई होति तौ आजुइ दुइ माँ से एकुइ रहि जाति। ऊ हमसे कहति" का मेढ़का अस टर्र-टर्र लगाये हौ।"जिलेदार" तो वह संभरा इतना हेकड़ हो गया , अच्छा चलो अब उसके पास मत जाओ और मत कुछ कहो। हम जिलेदार काहे के , जो उसको दो-दो पैसे का मोहताज न बना दिया। अच्छा मुंशी जी , उसका दावा बनवाकर कल ही मुख्तार के पास भेज दो।"

मुंशी "बहुत अच्छा। अभी एक ही फसल बाकी है , और तो कुछ है नहीं।"

जिलेदार " एक ही भेजिए , यही बहुत है।"

(जुलाई १९४७ ई.)

लोक-जीवन की संस्कृति को सहेजती हैं रामबहादुर मिश्र की कहानियाँ

डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स'

अवधी साहित्य की रचनाधर्मिता को काव्य की परिधि से निकालकर आधुनिक गद्य विधाओं में भी स्थापित करने के महत्त्वपूर्ण कार्य में जो गिने-चुने सृजनधर्मी अपनी पूरी निष्ठा के साथ जुटे हुए हैं , उनमें डॉ. रामबहादुर मिश्र का नाम अग्रणी है। वे अवधी कहानी लेखन के क्षेत्र में न केवल खुद सक्रिय हैं , बल्कि उन्होंने अवधी कहानी लेखन को एक आन्दोलन का रूप भी दिया है। उनकी प्रेरणा और प्रयासों से अवध-क्षेत्र के तमाम साहित्यकार अवधी कहानी लेखन की ओर प्रवृत्त हुए हैं।

यूँ तो लोक-कथाओं के रूप में अवधी किस्सागोई की परम्परा पुरानी है। अवध के लोक-जीवन में रची-बसी ये कहानियाँ वाचिक हैं , मनोरंजन प्रधान हैं एवं नैतिक मूल्यों की स्थापना व उपदेशात्मकता इनका मूल तत्व है। किन्तु इनमें आज के समय की जटिलताओं से दो-चार होने वाले आधुनिक भाव-बोध का अभाव है। अवध भारती प्रकाशन , बाराबंकी से प्रकाशित डॉ. रामवहादुर मिश्र की अवधी कहानियों का संग्रह 'नकछेद भाई' इस अभाव को भरने की दिशा में उल्लेखनीय कदम है।

संग्रह में 'जफड़ी' , 'डफाली चच्चा' , 'बाबा जी' , 'रमेसर' , 'रानी' , 'नकछेद भाई' , 'मन कै मइल' तथा 'पलई काका' शीर्षक कुल आठ कहानियाँ हैं , जो ग्राम्य-जीवन की बहुविध छवियाँ प्रस्तुति करती हैं। इन कहानियों में जहाँ ग्राम्य-जीवन का सांस्कृतिक रूप अपने पूरे वैभव व सरसता के साथ मौजूद है, वहीं मौजूदा दौर की ग्रामीण विद्रूपताओं, विसंगतियों का यथार्थ चित्रण बिना किसी लाग-लपेट के व्यक्त हुआ है।

संग्रह की पहली कहानी 'जफड़ी' आकार की दृष्टि से सबसे बड़ी कहानी है। यह कहानी गाँवों में व्याप्त जातीय ताने-बाने को परत-दर-परत उधेड़ती है। कहानी जहाँ जातीय अहं की निरर्थकता पर व्यंग्य करती है, वहीं हास्य के पुट के साथ उपजातीय व्यवस्था का भी मखौल उड़ाती है। कहानी का एक अंश देखें" एक बरमभोज माँ कउनो भूखा-पियासा मुल्ला जनेऊ पहिरि के, कपड़ा उतारि के बभनन की पांति माँ बैठ गवा। चर्चा होय लाग। बातचीत माँ बगल वाले वहिसे पूछिन कौन जाति अहिउ? मुल्ला बताईन बाभन। कौन बाभन ? पांड़े। कौन पांड़े ? अब मुल्ला हक्का-बक्का होय गए औ बोलि परे या अल्लाह पाड़े माँ पाण्डे। भेद खुलिगा।" कहानी का मुख्य उद्देश्य गाँवों में व्याप्त नशाखोरी व गुटवाजी की प्रवृत्ति को उजागर करना है। 'डफाली चच्चा' कहानी के माध्यम से लेखक ने लोक-जीवन की स्मृतियों का सुन्दर आख्यान रचा है। कहानी के नायक डफाली चच्चा गाँव के एक ऐसे चरित्र हैं जो जीवन-पर्यन्त सबके काम आते हैं . किन्तु बुढ़ापे की कारुणिक स्थितियों में कोई उनके काम नहीं आता। इस कहानी की स्त्री पात्र कुट्टा भुजइन एक बेसहारा , निर्धन , दलित महिला हैं जो गाँव के दबंग सवर्णों द्वारा शारीरिक शोषण का शिकार होती हैं। स्त्री संवेदना के पक्ष में खड़ा कथा लेखक जब इस निकृष्टतम यथार्थ को उकेरता है तो उसकी भाषा भी यथार्थपरक और तल्ख हो जाती है उनकी मजबूरी कै फायदा उठाय के दबंग घरन के जवान उनके शारीरिक शोषण करत रहैं। कुट्टा मजबूरी माँ सहत-सहत आदी होय गईं। निबरे कै जोइया , सबकै सरहज। जेइन पावै कुट्टा पर चढ़ाई कइ देय। खेत माँ , वगिया माँ , संझा-सकारे , दुपहरिया माँ जब जिहके जवानी चर्राय कुट्टा के भारे माँ आपनि आग बुतावै।" कहानीकार समाज की उस पुरुषवादी मानसिकता को भी आड़े हाथों लेता है जो हमेशा स्त्रियों को ही आरोपित करती रही है "इहमा उनकै कौनौ दोस नहीं मुला गाँव भर माँ कोऊ पतुरिया , कोऊ रंडी कहिके उनका गरियावत रहा। कोऊ कबौ पुरुषवादी समाज पर यक्कौ टीका-टिप्पणी नहीं किहिस , जिहकी वजह से उनकै यह हालत रही।"

रामबहादुर मिश्र सिर्फ ग्रामीण विद्रूपताओं को ही उजागर नहीं करते , वे बदलाव के उन पहलुओं को भी सामने लाते हैं जिन्होंने बेहतर कल की उम्मीद को बचाए रखा है। 'रानी' एक ऐसी ही कहानी है। शारीरिक विकलांगता के बावजूद कथा नायिका रानी अपनी लगन , मेहनत के बल पर न केवल पढ़ती-लिखती है , बल्कि स्वयं

सहायता समूह का गठन कर गाँव की तमाम स्त्रियों के लिए रोजगार का मार्ग सृजित करती है , उन्हें स्वावलम्बी बनाती है। आंगनवाड़ी केंद्र, समाज कल्याण विभाग , विद्यालय व बैंक से रानी को मिलने वाली फटाफट मदद के जरिये मिश्र जी जिन आदर्श स्थितियों का सृजन करते हैं , वास्तविकता में वे कम देखने को मिलती हैं। किन्तु यह भी सच है कि जन-कल्याण की अनेक सरकारी योजनाओं ने ग्रामीण जीवन को कमोवेश प्रभावित तो किया ही है। 'नकछेद भाई' भी इसी भाव-भूमि की कहानी है। विकलांग नकछेद भाई अपनी कारीगरी व परिश्रम के बल पर आर्थिक समृद्धि हासिल करते हैं। कहानी एक तरफ जहाँ श्रम के महत्त्व को प्रतिष्ठापित करती है , वहीं पारंपरिक शिक्षा के साथ-साथ रोजगार परक कौशल के विकास की आवश्यकता पर भी बल देती है। 'रानी' और 'नकछेद भाई' दोनों कहानियों को आदर्शवादी किन्तु प्रेरक कहानियों के रूप में देखा जा सकता है और एक अवधी लोकोक्ति की तर्ज पर कहा जा सकता है "जस रानी औ नकछेद भाई के दिन बहुरे तस सबकै दिन बहुरैं"।

'पलई काका' कहानी में कहानीकार नासटेलजिक हो जाता है। पलई काका गाँव की उस बुजुर्ग पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसने अनुभव के खुले आकाश के नीचे जिन्दगी की किताब को बड़ी सूक्ष्मता से पढ़ा है। पलई काका का ज्ञान बहुआयामी है। यह ज्ञान किसी विश्वविद्यालय की डिग्री से नहीं आया है वरन जीवन के खुरदुरे यथार्थ से निःसृत है। पलई काका का जीवन बड़ा संतुलित और आत्मीय है। गाँव के हर व्यक्ति के लिए अपनेपन से भरे पलई काका सबके सुख-दुःख में बराबर भागीदार बनते हैं। पलई काका को याद करते हुए लेखक भावुक हो जाता हे। उसे अफसोस है कि धीरे-धीरे समाज से ऐसे चरित्र खत्म होते जा रहे हैं। संभवतः वह साँचा ही टूट गया जिसमे ऐसे व्यक्तित्व ढला-बना करते थे। शहरी अन्धानुकरण के चलते गाँवों में सामुदायिकता और भाईचारे की वह भावना ही मर-बिला गई जिसे पलई काका जैसे लोग जीवंत रखते थे। कहानी के अंत में कथाकार अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए लिखता है "अबकी बेरिया कुछ अस संजोग परा कि चार दिन खातिर गाँव जाय का मौका मिला। गाँव माँ गाँव खोजत भये गाँव नहीं मिला। मुला पलई काका का खोजत कुम्हार टोला पहुंचेन तब पता लाग पलई काका साल भर पहिले चलि बसे। अव हमैं पूरा गाँव खंडहर औ समसान देखाय लाग। "

इस संग्रह की सभी कहानियाँ पाठकों को भरपूर आस्वाद देती हैं व उन्हें बाँधे रखने में सक्षम हैं। किन्तु शिल्प की दृष्टि से ये कहानियाँ कम, संस्मरण अधिक लगती हैं। इन्हें संस्मरणात्मक कहानी कहना उचित होगा। यहाँ संवादों के माध्यम से कथा का स्वाभाविक विकास नहीं होता अपितु वर्णनात्मक शैली अपनाते हुए कथाकार अपनी परोक्ष उपस्थिति शुरू से अंत तक बनाये रखता है। जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि अवधी की लोक-कथाएँ वाचिक परम्परा की रही हैं , जहाँ किस्सा सुनाने का अपना एक खास लहजा होता है। लेखन की दुनिया में कदम बढ़ाने के बावजूद अवधी कहानी अभी उस 'सुनाने' के चौपाली लहजे से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाई है। आधुनिक भाव-बोध व शिल्प-बोध के साथ अवधी कथा लेखन अभी चलना सीख रहा है। यह सुखद है कि डॉ. रामबहादुर मिश्र आधुनिक भाव-बोध के साथ अवधी कहानी को खड़ी बोली के समकक्ष खड़ा करने की दिशा में सक्रिय हैं। लेकिन नए-नए प्रयोगों के साथ शिल्पगत बदलाव आने अभी बाकी हैं। यहाँ मैं यह भी स्पष्ट करना चाहूँगा कि वर्णनात्मकता जहाँ एक ओर डॉ. रामबहादुर मिश्र के कथा-कौशल की सीमा है , वहीं उनकी कहानियों का सौन्दर्य भी इसी वर्णनात्मक शैली में निहित है। लोकभाषा की यह जानी-पहचानी शैली है। लोकभाषा का लेखन इसी शैली में अपने को ज्यादा सहज पाता है।

इस संग्रह को विशेष रूप से इसकी भाषा के लिए रेखांकित किया जाना चाहिए। अवधी बोली-बानी का देशज वैभव अपनी पराकाष्ठा के साथ यहाँ उपस्थित है। किसी अच्छी कहानी की सबसे बड़ी कसौटी यह होती है कि उसकी भाषा अपने कथात्मक ताने-बाने के साथ कितना तादाम्य स्थापित कर पाती है ? इस दृष्टि से डॉ. रामबहादुर मिश्र पूर्णतयः सफल रहे हैं। भाषा का ऐसा आत्मीय और निखरा रूप बहुत कम रचनाकार इस्तेमाल कर पाते हैं।

भूमंडलीकरण की आँधी ने बोलियों का बड़ा अहित किया है। देश की अन्य तमाम बोलियों की तरह

अवधी की भी बड़ी शब्द-सम्पदा या तो विलुप्त हो चुकी है या विलुप्त होने के कगार पर है। वैश्वीकरण ने बोलियों को कैसे और कितना आघात पहुँचाया है ?इस पर अलग से एक गंभीर चर्चा हो सकती है। यहाँ इस सन्दर्भ में सुखद यह है कि डॉ. रामबहादुर मिश्र ने अपने इस संग्रह के माध्यम से ठेठ अवधी के विलुप्त होते जा रहे शब्दों को बचाए-जिलाए रखने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इन कहानियों में अवधी लोकोक्तियों , मुहावरों , कहावतों का प्रसंगानुकूल बड़ा ही सुष्ठु और जीवंत प्रयोग हुआ है। मिश्र जी की इस भाषायी विशिष्टता के कारण कथा-प्रवाह मनोरम बन पड़ा है। आल्हा , बिरहा , चैती , कजरी , सावनी, निर्गुन, सुमिरिनी, मेला गीत , होरी, फगुवा, ध ंवारी, उलारा आदि अवध क्षेत्र के भूले-बिसरे लोकगीतों के प्रयोग ने कहानियों की रम्यता बढ़ा दी है। संग्रह की अंतिम कहानी 'पलई काका' में घाघ , भड्डरी की कहावतों का भी मिश्र जी ने भरपूर इस्तेमाल किया है। निश्चित ही अवध क्षेत्र के लोक-जीवन की विलुप्त होती जा रही सांस तिक धरोहरों को सहेजने , संरक्षित करने का स्तुत्य कार्य भी इस संग्रह के माध्यम से हुआ है। इसके लिए मिश्र जी बधाई के पात्र हैं। कुल मिलाकर यह एक पठनीय संग्रह है। मेरा स्पष्ट मत है कि इस कहानी संग्रह से अवधी कथा लेखन समृद्ध हुआ है।

2. रमई काका का पुनर्पाठ 'अवध ज्योति' का विशेषांक

डॉ. श्याम सुन्दर दीक्षित

अवध ज्योति का जनवरी - मार्च 2014 का रमई काका विशेषांक स्वयं में एक साहित्यिक दस्तावेज है जहाँ रमई काका के अवदानों की विविध व्याख्याएं एक साथ प्रस्तुत हुई हैं।

सम्पादक डॉ. रामबहादुर मिश्र ने उपलब्ध सामग्री का प्रस्तुतीकरण कुछ इस तरह किया है कि रमई काका के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का समग्र रूप एक साथ सुरूचि पूर्ण ढंग से एक जगह पाठक के लिए उपलब्ध हो सका है। यह सम्पादक के सम्पादन कौशल का प्रशस्त प्रमाण भी है।

पत्रिका की समग्रता अध्ययनोपरांत यह सोचने को विवश करती है कि जहाँ पर चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' के जन्म शताब्दी वर्ष पर उनके प्रति विनम्र श्रद्धाञ्जलि है वहीं रमई काका का पुनर्पाठ भी है जो आज भी समसामयिक परिस्थितियों में उनके अवदान को मूल्यांकित करते हुए यह भी बताती है कि काका का साहित्य आज भी प्रासंगिक है।

साहित्य का उद्देश्य ही है सबके लिए एवं समान हितकारी। किन्तु आज हम विविध वादों, मतों एवं वैश्विकता के चक्कर में या तो अन्यों का जूठन मौलिकता के नाम पर परोसते हैं या अतिरिक्त शालीनता एवं बुद्धिजीविता का खोल पहन कर स्वयं को अन्य समाज से काटकर बुद्धिजीवी साहित्य होने का दम्भ पालकर बैठे हुए हैं। आहलादन, लोक प्रसादन, लोकानुभवन एवं लोकहित की साधना से दूर आज का साहित्य एवं साहित्यकार आत्म मुग्धता के प्रायद्वीप का बन्दी हो गया है, जहाँ केवल बुद्धिजीवी बहसों का वहम एवं आत्मश्लाघा का नीरवनाद ही होता है।

यहाँ यह कहना असमीचीन न होगा कि अवध और अवधी भाषा दोनों भाग्यशाली है जहाँ वैराग्य के स्वर हैं तो प्रवृत्ति भी है। नीति, सदाचार, लोकोपकार, परदुःखकातरता तो इसके आत्मतत्व ही हैं। यही कारण है कि यहाँ प्रेम की पीर एवं मर्यादा के स्वर समभाव से गूंजे हैं। इन स्वरों ने विश्वमानवता को साहित्य का श्रेष्ठतम उपहार दिया है। इसी भाषा के कवि तुलसी हैं तो इसी के काका भी। यहाँ यह भी देखने योग्य है कि तुलसी के बाद चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' ही ऐसे कवि ठहरते हैं जिनकी जनव्याप्ति क्षेत्रीय सीमाओं को लांघ कर एक विशाल परिधि का निर्माण करती हैं काका का साहित्य उस प्रवाहित सरिता की तरह है जो अपने दोनों कूलों को समसिक्त करती है अर्थात काका के साहित्य ने अभिजन एवं सामान्य जन दोनों को समभाव से साहित्य के आह्लादन एवं प्रबोधन से तृप्त किया है।

रमई काका की लोक एवं उसकी मनः स्थिति देखने की क्षमता अद्भुत थी। लोक एवं लोक जीवन की ज्वलन्त समस्याओं एवं उनके दुःख सुख को काका ने मानो आत्मसात कर लिया था और इस चीज को हास्य का स्वरस देकर काका ने अनुभूति को काव्य बना दिया। इतना ही नहीं उनके सधे हुए स्वर ने उसे ऐसे अभिव्यक्त

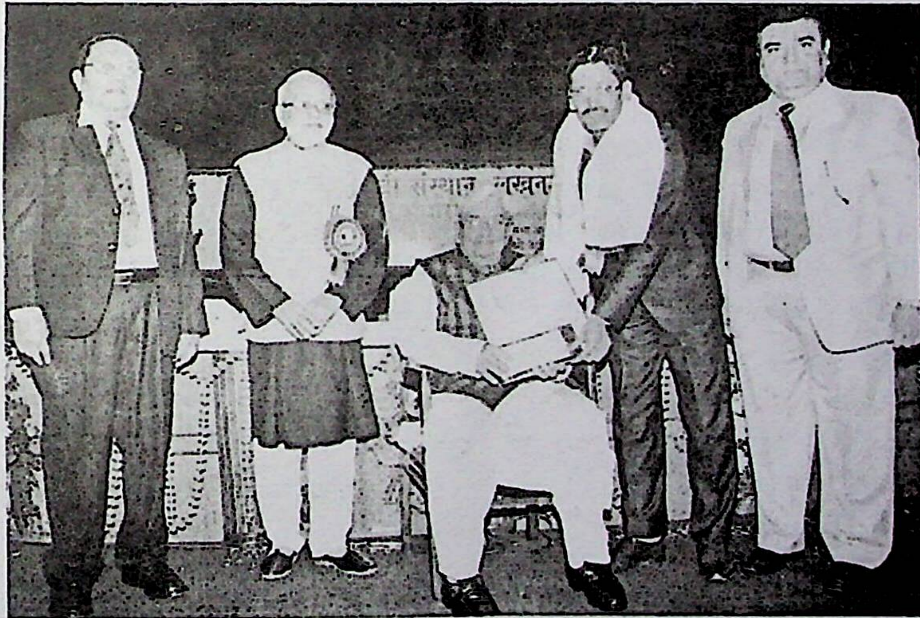
किया कि पाठक उसमें अपनी और अपने मन की बात समझ कर स्वयं को अन्वेषित करने लगता था। यद्यपि कुछ विद्वान समीक्षकों ने काका की कविताओं और नाटकों में मूर्खानुरञ्जन ही अधिक देखा है किन्तु यह देखते समय उनसे लोक का वह अधिकांश सामान्य जन ओझल ही रहा जो प्रायः शहरी चकाचौंध से दूर रहा है जब आज भी पेट भर अन्न की जुगाड़ में लगे लोग और रेल को न देख पाने वाले ग्रामवासी हैं तो काका के काव्य और नाटकों को कैसे मूर्खानुरञ्जन कहा जा सकता है। जबकि उनकी मान्यता है कि काका तब भी और आज भी उनके हृदय के स्पन्दन हैं। उनका मन काका की कविताओं में धड़कता है। कोई कुछ कहे किन्तु वास्तविक है जन स्वीकृति। काका लोक कवि हैं और लोक आज भी काका की कविताओं में उपस्थित है। उर्दू शायर शहरयार के शब्दों में कहें तो काका का सन्दर्भ कथन स्वयं मुखरित हो उठता है -

''हमने जब भी दास्ताने शौक छेड़ी दोस्तो,
हर किसी को ये लगा जैसे उसी की बात है।''

पत्रिका के विशेषांक में लेखों एवं संस्मरणों के माध्यम से अनेक विद्वान लेखकों ने जो भी सामग्री उपलब्ध करायी है वह आज भी और आगे भी काका के अध्येताओं के लिए महत्वपूर्ण है। साथ ही सम्पादक द्वारा उनकी कतिपय विशिष्ट कविताओं एवं ध्वनि नाटकों का समावेश करना भी अध्येताओं के लिए मार्गदर्शन से कम नहीं है। सारतः पत्रिका का यह रमई काका विशेषांक पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है।

और अन्त में हमारी भी अवधी के इस महान कवि नाटककार और कलाकार को सादर प्रणति जिनकी कान्तासम्मित उपदेश की कविता और साहित्य आगे आने वाले युगों-युगों तक लोक एवं लोकमानस को आहलादित करते रहेंगे।

सत्यनाम विद्यापीठ, गवारी रोड, शुगरमिल, बाराबंकी



उ0प्र0 हिन्दी संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष माननीय उदय प्रताप सिंह से नकछेद भाई कृति पर मलिक मोहम्मद जायसी पुरस्कार ग्रहण करते डॉ0 राम बहादुर मिश्र साथ में हैं भारत भारती सम्मान से सम्मानित दूध नाथ सिंह, संस्थान के निदेशक डॉ0 सुधाकर 'अदीब' तथा प्रमुख सचिव भाषा श्रीयुत शैलेश कृष्ण।

1. रमई काका : जन्मशती समारोह

(27 जुलाई 2014) गोस्वामी तुलसी दास के बाद अवधी भाषा को सर्वाधिक प्रतिष्ठा दिलाने वाले रमई काका का यह जन्म शताब्दी वर्ष है। जन्मशती समारोह अवध भारती संस्था द्वारा आयोजित किया जा रहा है जो फरवरी 2014 से प्रारम्भ होकर फरवरी 2015 तक चलेगा।

इसी क्रम में साहित्य अकादमी नई दिल्ली एवं अवध भारती संस्थान हैदरगढ़ के संयुक्त तत्वावधान में 27 जुलाई 2014 को जयशंकर प्रसाद सभागार लखनऊ में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें 'अवधी के उन्नयन में रमई काका के योगदान' पर विचार संगोष्ठी सम्पन्न हुई।

विचार संगोष्ठी को सम्बोधित करते हुए रमई काका के ज्येष्ठ सुपुत्र प्रो. अरुण त्रिवेदी ने कहा कि रमई काका का साहित्य अवध के गांवों से बहुत गहराई से जुड़ा है। उनके साहित्य के केन्द्र में गांव है और गांव के केन्द्र में किसान। वे परिष्कृत शिल्प के कवि थे। वाणी की विदग्धता ने उन्हें कथन की विशिष्ट भंगिमा भी दी थी। यही कारण है कि क्षेत्रीय भाषा के कवि होते हुए भी उनकी कविता का पराक्रम दिग्विजयी सिद्ध हुआ।

अवध ज्योति के सम्पादक डॉ. रामबहादुर मिश्र ने उन्हें ग्रामीण व्यवस्था और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने वाले कवि के रूप में प्रस्तुत करते हुए कहा कि रमई काका के हृदय में दीन-हीन किसान, मजदूर और अभाव ग्रस्त लोगों के प्रति गहरी सहानुभूति है। समतापूर्ण जीवन जीने के पक्षधर होने के कारण उनका काव्य क्रांतिकारिता एवं उग्र विचार धाराओं से पुष्ट रहा है।

आकाशवाणी लखनऊ की कार्यक्रम अधिशासी डॉ0 अनामिका श्रीवास्तव ने रेडियो और रमई काका पर अपना सारगर्भित वक्तव्य देते हुए कहा काका ने हिन्दू, उर्दू और अवधी को मिलाकर एक नयी भाषा गढ़ी। उन्होंने वैसवारी अवधी को रेडियो के माध्यम से प्रतिष्ठपूर्ण स्थान दिलाया।

बोली वानी के सम्पादक जगदीश पीयूष ने रमई काका के अवधी गद्य साहित्य की चर्चा करते हुए कहा वार्ताओं, निबन्धों और लेखों के अतिरिक्त रमई काका ने शताधिक अवधी नाटक लिखे हैं जिनमें सामाजिक नाटकों की संख्या अपेक्षाकृत सर्वाधिक है। सामाजिक नाटकों में समाज के विभिन्न घटकों की समस्यायें उद्घाटित की गयी है।

साहित्य अकादमी नई दिल्ली के हिन्दी सलाहकार मण्डल संयोजक प्रो0 सूर्य प्रसाद दीक्षित ने अपने वक्तव्य में कहा कि 'कृषक जीवन और ग्राम्य संस्कृति उनकी कविता के मुख्य विषय रहे हैं। भाव और शिल्प दोनों दृष्टियों से काका एक प्रौढ़, परिपक्व कवि रहे हैं। अपने लगभग पचास वर्षों के रचनाकाल में उन्होंने अवधी साहित्य की सर्वांगीण श्री वृद्धि की। अवधी को ग्रामीण भाषा से उठाकर साहित्यिक भाषा बनाने में जायसी और तुलसी के बाद पढ़ीस, वंशीधर शुक्ल और रमई काका की ऐतिहासिक भूमिका रही है। नेपाल से पधारे अवधी साहित्यकार विक्रम मणि त्रिपाठी ने नेपाल में अवधी की दशा दिशा पर शोध पत्र पढ़ा।

डॉ0 विद्या बिन्दु सिंह ने कहा कि रमई काका ने अपनी रचना व भाषा शैली से अवधी विभाषा को लोक भाषा के स्तर से ऊपर उठाकर उसे साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया है। विचार संगोष्ठी में प्रतिष्ठित रंगकर्मी तथा साहित्यकार उर्मिल कुमार थपलियाल, संगीतकार केवल कुमार, डॉ0 श्याम सुन्दर दीक्षित, डॉ0 विनय दास, ओम प्रकाश जयन्त, कथाकार प्रदीप तिवारी, अवधी विकास संस्थान के अध्यक्ष विनोद मिश्र, अवध भारतीय के उपाध यक्ष विश्वम्भर नाथ अवस्थी, विष्णु शर्मा, पर्दाफाश टुडे के सम्पादक मुनेन्द्र शर्मा, डॉ0 पवन अग्रवाल, श्री प्रकाश बाजपेयी, शम्भुनाथ पाण्डेय, डॉ0 अलका पाण्डेय आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर जगदीश 'पीयूष' की पुस्तक अवधी साहित्य सर्वेक्षण और समीक्षा तथा राजेन्द्र कृष्ण श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित साहित्य प्रोत्साहन के रमई काका विशेपांक का लोकार्पण भी किया गया।

2. लोकार्पण - 'कबीर गंथावली - लेखक कमला पति पाण्डेय

राष्ट्रीय पुस्तक मेला परिसर, लखनऊ। 26 सितम्बर

राष्ट्रीय पुस्तक मेले में लोकार्पणों की शृंखला में कबीर साहित्य के मर्मज्ञ चिन्तक साहित्यकार कमलापति पाण्डेय की कृति कबीर ग्रंथावली (प्रबोधिनी व्याख्या सहित) का लोकार्पण विद्वानों द्वारा किया गया। समारोह की अध्यक्षता प्रसिद्ध कथाकार शिवमूर्ति ने की। विषय प्रवर्तन करते हुए डॉ0 रामबहादुर मिश्र ने कहा कि कबीर

अपने समय के सबसे बड़े साम्यवादी चिन्तक थे। कबीर ने वर्णव्यवस्था, धर्म और कर्मकाण्डों की तिकड़ी में फंसे लोकमानस को इस बंधन से मुक्त कराया। उस समय लोग लोक व्यवहार को ही धर्म समझ बैठे थे जिसका स्वरूप कर्मकाण्डों एवं पाखण्डों से निर्मित था। इन्हीं रूढ़ परम्पराओं का खंडन कबीर ने किया।

लेखक कमलापति पाण्डेय ने अपने लेखकीय वक्तव्य में कहा उनके पहले की तीन कृतियां पंथी-बीजक और उसमें आये संदर्भों पर आधारित थी जबकि यह कृति कबीर वाणी की समग्रता को समाहित किये हुए हैं। परिचयात्मक अध्यायों में कबीर के व्यक्तित्व और उनकी साधना के विवादित कर दिये गये बिन्दुओं पर साक्ष्यों में कबीर के व्यक्तित्व और टिप्पणी है और कबीर वाणी की व्याख्या, कबीर की लोक छवि, कबीर दर्शन, कबीर के व्यक्तित्व के साथ-साथ भतृहरि जी के 'वाक्यपदीयम' को आधार बनाकर की गयी है। यह जिज्ञासुओं को संतुष्ट करेगी और विद्वानों को कबीर के बारे में धारणा बदलने को विवश करेगी।

समीक्षक डॉ0 विनयदास ने कबीर साहित्य की उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए कहा कबीर का आकर्षण दिनों दिन बढ़ा है। श्याम सुन्दर दास, हजारी प्रसाद द्विवेदी से लेकर धर्मवीर भारती तक ने उनकी कविताओं का नया भाष्य किया है। इसी क्रम में श्री पाण्डेय ने कबीर ग्रंथावली के मार्फत एक नया साहित्यिक पाठ तैयार किये है जो सर्वथा पठनीय और विचारणीय है। वरिष्ठ साहित्यकार कमलेश भट्ट 'कमल' ने अपना वक्तव्य प्रस्तुत करते हुए कहा लेखक कमलापति पाण्डेय कबीर और उनके साहित्य के ऐसे मर्मज्ञ विद्वान हैं जिन्होंने मगहर की धरती से कबीर को नये सिरे से पहुंचाने का प्रयास किया। वे कबीर के बारे में फैली तमाम किंवदंतियों को तर्कों के आधार पर खारिंज करते हैं और एक पढ़े लिखे तथा ज्ञानी कबीर को हमारे सामने लाते हैं। उन्होंने कबीर की सखियों के अर्थों की गूढ़ता का नवीन अन्वेषण किया है।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में श्रीयुत शिवमूर्ति ने कहा कि कमलापति पाण्डेय कबीर के भीतर एक शोधक और जिज्ञासु की भांति प्रवेश करते हैं न कि विशेषज्ञ की तरह। विशेषज्ञ बनते ही शोध जिज्ञासा की ललक समाप्त हो जाती है। यह ललक ही पाण्डेय जी की शक्ति है जिसके बल पर वे कबीर का सतत अवगाहन करते आ रहे हैं। उन्होंने कबीर के ज्ञान का कबीर की व्याप्ति का एक नया संसार खोला है। उनकी व्याख्या का उद्देश्य अपनी पंडिताई से चौंकाना नहि अपितु कबीर के रचना संसार में गहरे पैठने की दृष्टि पैदा करना है।

विमोचित कृति का प्रकाशन 'शुभदा प्रकाशन सुभाष मार्ग शहादरा दिल्ली से हुआ। लेखक कमलापति पाण्डेय की चौथी कृति है। इसके पूर्व उनकी आधी साखी कबीर की, साखी आंखी ज्ञान की तथा मोर हीरा हेराय गा कचरे मा पुस्तकें आ चुकी है और पांचवी पुस्तक 'कबीर एक सम्यक सत्यार्थ' प्रकाशनाधीन है।

3. जयशंकर सभागार, लखनऊ अवधी समीक्षा ग्रंथ ' परिप्रेक्ष्य को सही करते हुए के लोकार्पण के अवसर पर कृति और अवधी के विविध संदर्भों पर सार्थक एवं गहन चर्चा हुई। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे डॉ0 योगेन्द्र प्रताप सिंह तथा अध्यक्षता प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित ने की। ग्रंथ के लेखक डॉ0 विनयदास ने कृति के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए कहा अनेक अवधी कृतियों के अध्ययन-मनन ने ही मुझे अवधी में नई समीक्षा पद्धति की ओर उन्मुख किया। अवधी में कोई मुकम्मल समीक्षा ग्रंथ नहीं था।

कार्यक्रम के संचालक डॉ0 रामबहादुर मिश्र ने कहा कि समीक्ष्य कृति में अवधी कथा साहित्य का विमर्श बहुत ही महत्वपूर्ण है वह भी आधुनिक संदर्भों में। इस कृति में तमाम नये तथ्यों के उद्घाटन के साथ ही कुछ भ्रामक तथ्यों का भी निवारण किया है। समीक्षक डॉ0 श्याम सुन्दर दीक्षित ने पुस्तक को एक विशिष्ट उपलब्धि बताते हुए कहा कि कृति ने जहां प्राचीन प्रतिमान तोड़े हैं कुछ अवधारणाओं को निरर्थक सिद्ध किया है तो नवीन तथ्यों को भी प्रस्तुत किया है। कथाकार महेन्द्र भीष्म का विचार था कि विनयदास के समीक्षा ग्रंथ ने अवधी विद्वानों और साहित्यकारों का ध्यान समीक्षा की ओर आकृष्ट किया है।

वरिष्ठ कथाकार शिवमूर्ति ने कहा कि समीक्षा ग्रंथ ने अवधी भाषा और साहित्य के ज्ञात अल्पज्ञात पक्षों को उजागर किया है। इसमें अवधी कथा साहित्य विशेष रूप से अवधी उपन्यासों की विस्तृत जानकारी दी है।

अयोध्या शोध संस्थान के निदेशक तथा कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ0 योगेन्द्र प्रताप ने कृति की उपादेयता पर चर्चा करते हुए कहा अवधी साहित्य मूलतः कविता प्रधान है। अतः अधिकांश समीक्षायें कविताओं पर केन्द्रित रही किन्तु विनयदास की कृति में कथा साहित्य की गहन पड़ताल की गयी है यह इसकी विशिष्ट उपलब्धि है।

अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित ने कहा कि विनयदास जी दीर्घकाल से अवधी भाषा और साहित्य को प्रतिष्ठित करने की दिशा में अपनी समूची शक्ति ओर सक्रियता से संलग्न हैं। इधर उन्होंने अवधी में लिखे गये प्रकाशित अप्रकाशित कथा साहित्य को समकालीन हिन्दी खड़ी बोली के कथा साहित्य के समानान्तर स्थापित करने का भरसक प्रयास किया है। विचार गोष्ठी में कथाकार वीरेन्द्र सारंग, ओ.पी. जयन्त, विष्णु शर्मा, अवधी विकास संस्थान के अध्यक्ष विनोद मिश्र, विश्वम्भरनाथ अवस्थी, डॉ0 विद्या बिन्दु सिंह, मनसा पब्लिकेशन की संचालिका डॉ0 मनसा पाण्डेय आदि ने अपने विचार व्यक्त किये।

4. सांसद दद्दन मिश्रा ने किया काव्य-संग्रह 'किशोर-कलरव' का विमोचन : बलरामपुर - जवाहर नवोदय विद्यालय बलरामपुर के विद्यार्थियों की कविताओं के संकलन 'किशोर-कलरव' का विमोचन गत दिनों सांसद श्रावस्ती श्री दद्दन मिश्रा ने किया। इस काव्य-संग्रह का सम्पादन चर्चित युवा साहित्यकार एवं विद्यालय के वरिष्ठ प्रवक्ता डॉ. दिनेश त्रिपाठी 'शम्स' ने किया। उपसम्पादन हिन्दी शिक्षक अनिल मौर्या तथा सहयोगी सम्पादन कक्षा-१२ के विद्यार्थी विकास प्रताप वर्मा एवं महेश मिश्रा ने किया। विमोचन-समारोह में बोलते हुए सांसद दद्दन मिश्रा ने कहा कि ऐसे रचनात्मक प्रयासों से विद्यार्थियों की प्रतिभा को विकसित होने का अवसर मिलता। सम्पादक दिनेश त्रिपाठी शम्स काव्य-संकलन की विशिष्टताओं पर प्रकाश डालते हुए बताया की इस संग्रह की सभी रचनाएं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के द्वारा चलाये गए स्वच्छता-अभियान को समर्पित हैं। उन्होंने कहा की इस संग्रह के माध्यम से विद्यार्थियों को स्वच्छता के प्रति सजग व जागरूक होने की प्रेरणा मिलेगी। इस मौके पर जवाहर नवोदय विद्यालय बलरामपुर के प्रधानाचार्य डॉ. गोपालकांत मिश्रा ने बच्चों की सृजनात्मक प्रतिभा की प्रशंसा करते हुए कहा कि आज तोतली जबान में कवितायें लिखने वाले इन्हीं बच्चों में कल का बड़ा रचनाकार छिपा हुआ है। इस अवसर पर छात्र निशांत मिश्रा, विकास अवस्थी, विकास प्रताप वर्मा , शिवा गुप्ता ने इस काव्य-संग्रह में संकलित अपनी कविताओं का वाचन भी किया। समारोह में विद्यार्थियों, शिक्षकों, अभिभावकों सहित जनपद के तमाम गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे। (प्रस्तुति-डॉ0 दिनेश त्रिपाठी 'शम्स')

5. राष्ट्रीय संगोष्ठी : जयनारायण व्यास विश्व विद्यालय जोधपुर द्वारा आयोजित तथा भारतीय समाज विज्ञान एवं अनुसंधान परिषद नई दिल्ली के सहयोग से 5 और 6 दिसम्बर 2014 को बद बद रे चन्नण का रूख विषय पर केन्द्रित संगोष्ठी सम्पन्न हुई। इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में विद्वान वक्ताओं ने लोक सांस्कृतिक परम्परा एवं सामयिक सन्दर्भ के विविध पक्षों पर अपने वक्तव्य प्रस्तुत किये। संगोष्ठी के मुख्य विचारणीय बिन्दु थे - लोकगीतों में निरुपित सामयिक संदर्भ, लोक कथाओं की सम सामायिकता, लोकगाथाओं की समसामयिकता, बाल-लोक कथाओं में मनोविज्ञान, श्रम प्रधान लोकगीत एवं उनका सौन्दर्य, लोकगीतों व लोक कथाओं का फिल्मों पर प्रभाव लोकनाट्य परम्परा, लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकोक्तियां, लोरिया, लोक की वाणी, पड़ चित्रांकन एवं वाचन, लोक कलायें गांडणा आदि, लोक गायन, लोक चिकित्सा, हरजस, लोक संस्कृति, के संरक्षण के उपाय आदि। इस राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजक डॉ0 महीपाल सिंह 'राठौण' थे।

6. लोक भूषण सम्मान पीयूष को

- अवध-ज्योति के संरक्षक, बोली बानी के सम्पादक तथा अवधी अकादमी के अध्यक्ष एवं अवधी के महत्वाकांक्षी ऐतिहासिक प्रकाशन अवधी ग्रंथावली (दस खण्ड) के सम्पादक श्रीयुत जगदीश 'पीयूष' को उनकी लोकोन्मुखी साहित्य साधना हेतु उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने 2013 का लोक भूषण सम्मान देकर सम्मानित किया है। यह सम्मान समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष तथा उ0प्र0 के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने 7 दिसम्बर 2014 को एक सम्मान समारोह में दिया। सम्मान पत्र के साथ दो लाख रूपये की धनराशि भी प्रदान की गयी है।

7. जयन्त को बलभद्र प्रसाद दीक्षित पढ़ीस सम्मान

- अवध ज्योति के प्रबंध सम्पादक तथा अवध भारती संस्थान के सचिव पूर्व खण्ड शिक्षाधिकारी ओम प्रकाश 'जयन्त' को उनकी पुस्तक अवधी लोकरंग के प्रकाशन हेतु 2013 का बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' सर्जना सम्मान प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त श्रीयुत जयन्त को बीस हजार रूपये की धनराशि भी प्रदान की गयी है।